मनचाही सन्तान

डॉ॰ देवशर्मा वेदालंकार

सुख-प्राप्ति

लगभग 3 वर्ष पूर्व यह पुस्तक 'मनचाही संतान' खरीद कर पढ़ने का सुअवसर मिला। हमारे पहले से दो बेटियां थीं, और हृदय में पुत्र प्राप्ति की प्रबल इच्छा थी। ऐसे में इस पुस्तक का मिलना, मानो भगवान ने स्वयं आकर हमारा हाथ थाम लिया हो। इसको पढ़ने पर हमारी काफी हद तक चिंता दूर हो गई और आगे के लिए एक मार्ग मिला। हमने कई बार इसे पढ़ा और जब सारी बात स्पष्ट समझ में आ गई तब हमने इस पर अमल किया। प्रभु की कृपा से हमारी इच्छा पूर्ण हुई और एक सुन्दर एवं स्वस्थ पुत्र की प्राप्ति हुई। इसके लिए हम इस पुस्तक के लेखक का हृदय से आभार प्रकट करते हैं।

इस पुस्तक ने हमारे परिवार को इतना प्रभावित किया कि जब 'कुआं पूजन' और साथ ही 'मां भगवती का जागरण' हुआ तब हमने इसकी और प्रतियां मंगवाकर इसे प्रसाद के साथ मित्रों एव परिवारजनों को भेंट किया। सभी ने इसे काफी सराहा और लाभान्वित हुए। इस पुस्तक की हम नवविवाहित युगल को भी आशीर्वाद के रूप में देने का प्रयत्न करते हैं ताकि हमारी तरह ही लोग भी इसका लाभ उठा सकें और शिशु को संसार में आने से पूर्व ही सुन्दर संस्कार दे सकें।

भावना मितल
योगेश चन्द मितल
3232/236, राम नगर
त्री नगर, दिल्ली–35

मनचाही-सन्तान

महापुरुषों के मुख से

जो मनुष्य जगत् का जितना उपकार करेगा, उसको उतना ही परमेश्वर की व्यवस्था से सुख प्राप्त होगा।

महर्षि दयानन्द सरस्वती (ऋ०भा० भू०– वेदविषय विचार)

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक व सामाजिक उन्नति करना।

आर्यसमाज के नियमों से

ओ३म्

नवयुवकों की चाहत, बुजुर्गों की राहत।
अतीत की आहट, भविष्य की मुस्कराहट।।

मनचाही सन्तान

एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व

डॉ० देवशर्मा वेदालंकार

परिवार परामर्शदाता
योग विशेषज्ञ

कृतश्री प्रकाशन

प्रकाशक :
कृतश्री-प्रकाशन
A-1/48 सेक्टर 6, रोहिणी, दिल्ली-110085 दूरभाष- 7056240

संस्करण : सप्तम 2003

मूल्य : तीस रुपये

लेजर कम्पोजिंग :
जे.डी. कम्प्यूटर, मुखर्जी नगर, दिल्ली–110009, फोन : 7118813

मुद्रक :- राधा प्रेस, कैलाश नगर, दिल्ली-३१

पुस्तक प्राप्ति-स्थान :

★ **कृतश्री-प्रकाशन**
A-1/48/से. 6 रोहिणी दिल्ली-110085, दूरभाष : 7056240

★ **वैदिक साहित्य सदन**
कैलाश नगर, दिल्ली-31, दूरभाष : 2246646

★ **गोविन्दराम हासानन्द**
नयी सड़क, दिल्ली–6, दूरभाष : 3914945

समर्पण

जिनके अथक
परिश्रम, त्याग और तपस्या
से जीवन का निर्माण हुआ
उन पूज्य माता-पिता
श्रीमती विमला देवी एवं
श्री पं० हरपाल जी शास्त्री
को सादर समर्पित
करता हूँ

प्रकाशकीय

इस प्रकार के साहित्य की बहुत समय से प्रतीक्षा की जा रही थी। साहित्य तो बहुत था परन्तु सटीक, संक्षिप्त-सारगर्भित साहित्य जिसे युवा वर्ग भी रुचि से पढ़ सके, अभाव था । ऐसा प्रतीत होता है कि युवा लेखक की यह पुस्तक इस प्रकार के अभाव को दूर करने में सफल हो पायेगी। आप एक सुयोग्य प्रवक्ता भी हैं। बार-बार विषय का विवेचन करके इस पुस्तक को लिखा है। शोध करना आपका स्वभाव है। मानव-निर्माण से सम्बन्धित सामग्री को खोज निकालना आपकी रुचि है। आपकी भाषा अत्यन्त सरल व स्पष्ट है, जिससे कि सर्वसाधारण भी सुरुचि पूर्वक पुस्तक का अध्ययन कर लाभान्वित हो सके।

यह इस पुस्तक का अभिनव संस्करण है। इस अल्पावधि में इस पुस्तक के अनेक संस्करण आपने स्वीकार किये हैं। इससे पता चलता है कि यह पुस्तक आपके लिए अत्यन्त उपयोगी है। मैं इसके लिए आप सभी का आभारी हूँ। आशा करता हूँ कि आगे भी आप इसी प्रकार से अपना सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

अतः सभी से अपेक्षा है कि इस पुस्तक का स्वयम् अध्ययन करें तथा दूसरों तक पहुँचा कर पुण्य के भागी बनें।

—प्रकाशक

'मनचाही सन्तान' ही क्यों ?

पुस्तक का नाम **'मनचाही सन्तान'** ही क्यों रखा गया ? आज के परिप्रेक्ष्य में ऐसा प्रश्न उठना स्वाभाविक है। आज भी सन्तानों में 'लड़कों' को ही मनचाहा माना जाता है। यह एक अलग प्रश्न है कि ऐसी सोच हमारी अपनी है या किसी और की, कुछ भी हो, ऐसा ही हो रहा है, इससे इन्कार भी नहीं किया जा सकता है, परन्तु वर्तमान स्वरूप में इसे रोकना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि—

★ हमें लड़का ही चाहिए, किसी भी कीमत पर क्यों न मिले ?
★ भले ही भ्रूण-हत्या क्यों न करनी पड़े ?
★ दवाइयां खाकर लिंग परिवर्तन क्यों न कराना पड़े ?
★ पड़ोसी के बच्चे की बलि भी क्यों न देनी पड़े ?
★ किसी का घर भी क्यों न जलाना पड़े ?
★ भले ही लड़का बड़ा होकर आपकी परेशानियों का कारण क्यों न बने ?

क्या ऐसा नहीं हो रहा ? इस तरह की मानसिकता को, अन्धविश्वास को रोकना तथा इस जंजाल से लोगों को बाहर निकालना कितना आवश्यक है ?

इस प्रकार के भ्रमों से निकालने के लिए **'मनचाही-सन्तान'** का सही स्वरूप लोगों के सम्मुख रखने के लिए इस पुस्तक का नाम मनचाही सन्तान रखा गया है। **'मनचाही-सन्तान'** से अभिप्राय ऐसा बच्चा लड़का या लड़की, जिसके विषय में हम ने पहले से ही विचार कर लिया हो, तैयारी करनी प्रारम्भ कर दी हो। उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व मनचाहा हो, दूसरे शब्दों में **'मनचाही सन्तान'** को यदि श्रेष्ठ सन्तान कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न करके माता-पिता प्रशंसा के पात्र बनें। डॉ० होलक्रुक के शब्दों में **''श्रेष्ठ सन्तान का उत्तमता से उत्पन्न करना सब से उच्च श्रेणी का काम है जो कभी इस पृथिवी पर हुआ हो। हम हैरेट होसमर की प्रशंसा के पुल बाँध देते हैं, जिसने जेनूविया के पत्थर की मूर्त्ति घड़ी है परन्तु**

उस पुरुष या स्त्री की जितनी प्रशंसा की जाए उतनी ही थोड़ी है जो कि संसार में श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न करते हैं।''

आप कह सकते हैं कि आज समाज में **'मनचाही सन्तान'** का जो प्रभाव लोगों के मन-मस्तिष्क पर पड़ा हुआ है उसे नहीं हटाया जा सकता है। ऐसा नहीं है एक पत्थर सड़क पर इस तरह पड़ा हुआ है कि मार्ग का रोड़ा बन गया अर्थात् मार्ग अवरुद्ध हो गया, तभी उस भीड़ से कुछ नौजवान आते हैं और उस पत्थर को हटाकर मील का पत्थर बना देते हैं। गलत परम्पराएं, धारणाएं एवं विश्वास आज भी हमारे समाज को काले नाग की तरह डँस रहे हैं और हम असहाय डँसे जा रहे हैं। हम उन चूहों की भाँति प्रतिदिन सताये एवं खाये जा रहे हैं जो बिल्ली के गले में घंटी नहीं बाँध सके।

आओ मिलकर नये युग का निर्माण करें। इस विषय को स्वस्थ मानसिकताओं एवं परम्पराओं के साथ परिचर्चा का विषय बनाएं। यह चर्चा पिता-पुत्र, माँ-बेटी, गुरु-शिष्य, वृद्ध-जवान तथा जन-जन के बीच शुरू हो। इस प्रकार की चर्चा के अभाव में विपरीत असर पड़ रहा है। वास्तव में जिनको जानकारी होनी चाहिए उनको नहीं है। जिन्हें बच्चे को जन्म देना है उनको कहाँ ? जानकारी तो वृद्ध माँ-बाप के पास ही रह गयी है। इसलिए आओ चर्चा में भाग लें और मनचाही सन्तान का सही स्वरूप लोगों को समझाएं।

देवशर्मा वेदालंकार

'मनचाही-सन्तान' पुस्तक क्यों पढ़ें?

यदि आप चाहते हैं–

- ❑ समाज सुन्दर बने।
- ❑ माता-पिता के ऋण से उऋण हो।
- ❑ बच्चे अति श्रेष्ठ, बुद्धिमान्, शुभ, गुण, कर्म स्वभाव वाले हों।
- ❑ बच्चे स्वस्थ हों। (हृदय रोग, पीलिया, कैंसर आदि रोग रहित)
- ❑ उनका दृष्टिकोण पवित्र हो।
- ❑ कोई पुण्य आत्मा आपके यहाँ जन्म ले।
- ❑ लड़कियों का गर्भपात न करवाएँ।
- ❑ बच्चे माँ-बाप का सम्मान करने वाले हों।
- ❑ बच्चे अपंग न हों।
- ❑ आपकी और आपके बच्चों की कीर्ति फैले।

विषय-सूची

✦ दो शब्द 15

✦ *अध्याय 1* 22

बच्चे की शिक्षा कब से प्रारम्भ हो?

(जन्म से न्यूनतम 16 वर्ष पूर्व)

✦ *अध्याय 2* 25

हम बच्चे को क्या बनाना चाहते हैं?

(डॉक्टर, इञ्जीनियर या मनुष्य)

✦ *अध्याय 3*

हम बच्चे का निर्माण कैसे करें?

निर्माण से अभिप्राय

गर्भाधान के लिए उपयुक्त रात्रियाँ एवं समय

रात्रिगणना नियम

धातु शुद्धिकरण

पुत्र–उत्पत्ति–उपाय। पुत्री–उत्पत्ति–उपाय।

महापाप 'भ्रूणहत्या' से बचाव।

गर्भ–रक्षा और स्वस्थ–सन्तान बनाने के उपाय।

बच्चे की मानसिक शक्ति का विकास।

संगीत का प्रभाव।

पुस्तकों का प्रभाव।

✦ *अध्याय 4* 41

क्या टी०वी० व समाज हमारे बच्चों को बिगाड़ रहा है?

बच्चे को टी०वी०–प्रूफ, सेक्स–प्रूफ, हिंसा–प्रूफ, वातावरण–प्रूफ कैसे बनाया जाये?

✦ *अध्याय 5* 47

बच्चे का दृष्टिकोण

(अपने प्रति, परिवार, समाज व राष्ट्र के प्रति)

✦ *अध्याय 6* 52

निर्माण किए गए मनुष्य का स्वरूप एवं कसौटी

✦ **निष्कर्ष** 59

✦ **आपके प्रश्न** 60

✦ **छोटे अक्षर...** 63

✦ **सन्दर्भ सूची** 64

✦ **आपके पत्र आपकी सम्मति** 67

✦ **भजन** 72

दो शब्द

आजादी की स्वर्ण जयन्ती पर यदि यह प्रश्न उठे कि राष्ट्र की ज्वलन्त समस्या क्या है ? तो आप कहेंगे कि देश का पर्यावरण दूषित हो गया है। मैं कहूँगा, नहीं। देश की अर्थव्यवस्था में घाटा हो रहा है शायद यह हो परन्तु यह भी नहीं। फिर ये समस्याएँ या और समस्याएँ शायद हम बर्दाश्त कर लें, परन्तु युवकों का पर्यावरण दूषित हो रहा है, जिसे हम सहन नहीं कर सकते हैं, परन्तु...... कर रहे हैं। क्या इससे बढ़कर कोई समस्या हो सकती है जब किसी राष्ट्र का युवक भटक जाए तो समझ लीजिए आगे आने वाली पीढ़ी कितनी कमजोर होगी ?

एक तीन या चार वर्ष का बच्चा जिसने अभी बोलना सीखा है। माँ के पास बैठा है और गाना गाता है—'तू चीज बड़ी है मस्त मस्त', 'मैं हूँ आशिक आवारा' हम सुनते हैं तो बड़ा अच्छा लगता है परन्तु क्या कभी हम सोच पाते हैं कि बच्चे के पवित्र अन्तःकरण पर ऐसी पंक्तियाँ लिख दी गई हैं—जिनका असर जिन्दगी भर रहेगा। इसके अतिरिक्त और कोई कविता, मन्त्र दोहा भी बच्चे के मुख से निकल सकता है परन्तु ऐसा नहीं होता क्योंकि बच्चे के सामने कभी बोला ही नहीं जाता है। इसीलिए हम बच्चे से कैसे उम्मीद कर सकते हैं कि वह हमारा वास्तविक उत्तराधिकारी बने। बिना उत्तराधिकारी पैदा किए हम परिवार को सही स्वरूप नहीं दे सकते, राष्ट्र की तो बात ही छोड़ दें।

यदि सच्चे अर्थों में देखा जाए तो हमारी समस्या उत्तराधिकार की समस्या है जिससे हम बेखबर हैं। एक माँ अपने बेटे के साथ रहती थी। अपने घर के आँगन में एक बगीचा सँवारा हुआ था। एक दिन अचानक माँ बीमार हो गई, अब माँ को चिन्ता हुई कि उसका बगीचा कौन सँभालेगा? बेटे ने कहा, 'माँ तू क्यों चिन्तित होती है ? मैं तेरे

बगीचे को सँभालूंगा।' माँ निश्चिन्त हो गई। स्वस्थ होने के बाद माँ ने देखा बगीचा तो सूख गया। बेटे को बुलाया और पूछा, 'बेटे ! तूने कहा था कि मैं तेरा बगीचा सँभाल लूंगा परन्तु यह तो सूख गया।' बच्चा तुरन्त बोल उठा, 'माँ मैं तो प्रतिदिन पौधों को झाड़ता, पौंछता तथा पानी छिड़कता था फिर भी ये सूख गए ! मैं क्या करूँ ?' माँ बोली, 'बेटे ! पानी छिड़कने, झाड़ने या पौंछने से बगीचा हरा-भरा नहीं रहता है। पानी तो जड़ (मूल) में दिया जाता है।' इसी प्रकार हम भी पानी पत्तों पर छिड़क रहे हैं, इसलिए हमारी जीवन रूपी वाटिका सूख रही है। हरियाली समाप्त हो रही है और हम नीरस होते जा रहे हैं, रस सूख गया है तो फिर जीवन कहाँ है ?

प्रायः सुना जाता है 'बच्चे' कहना नहीं मानते हैं। टी०वी० व समाज ने बच्चों को बिगाड़ दिया है। ये विचार ही इस पुस्तक को लिखने का मुख्य कारण बने। सात-आठ वर्षों से निरन्तर हम विचार करते रहे और विभिन्न मंचों से प्रवचन व चर्चाएं भी करते रहे हैं। लोगों ने पसन्द किया और विचार किया कि ये विचार पुस्तक के रूप में सामने आयें। भले ही हम कितने आधुनिक क्यों न हों, शिक्षा का सही स्वरूप हम बच्चों के आगे नहीं रख पाते। कारण चाहे कुछ भी हों फिर भी हम बच्चों को जो देना चाहते हैं, पुस्तक के माध्यम से दे सकते हैं।

पुस्तक लिखने का उद्देश्य यह बताना है, कि जिस तथ्य को हमें अधिक महत्त्व देना चाहिए था उसको हम ने न के बराबर महत्त्व दिया है। यह जरूरी नहीं है कि जो भूल पहले समाज से हुई है वही भूल हम भी करके सीखें। हम उनके अनुभव के आधार पर भी सीख सकते हैं।

इस पुस्तक को 6 अध्यायों में बाँटा गया है। प्रथम अध्याय—**बच्चे की शिक्षा कब से प्रारम्भ हो ?** इस को बच्चे के जन्म से न्यूनतम 16 वर्ष पूर्व माना गया है। विषय थोड़ा नया अवश्य है परन्तु चिन्तनीय है। नौ महीने के समय हम वैसा ही व्यवहार, खान-पान, रखेंगे जैसा 16, 17, 18, 20 वर्षों तक हमारा निर्माण हुआ है। आप अपने जीवन में तथा अपने परिवार में यही स्थिति पायेंगे।

दूसरे अध्याय में **हम बच्चे को क्या बनाना चाहते हैं?** (डॉक्टर, इञ्जीनियर या मनुष्य) विषय पर विचार किया है। यदि 50 प्रतिशत

संस्कार बच्चा पिछले जन्मों से लेकर आता है तो 50 प्रतिशत यहाँ उसका निर्माण किया जा सकता है। यदि हम निश्चय कर लें कि हमें 'ऐसा बच्चा' चाहिए, मात्र निश्चय करने से ही बच्चे में प्रभाव आ जाएगा। **'बच्चे का निर्माण कैसे किया जाए ?'** इस विषय में तीसरे अध्याय में विचार किया गया है। यह एक जटिल समस्या है। निर्माण संस्कार के माध्यम से किया जा सकता है। इस विषय में संस्कारों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

टी०वी०-प्रूफ, सेक्स-प्रूफ, हिंसा-प्रूफ, बच्चा बन सके इसके लिए चतुर्थ अध्याय में चिन्तन किया गया है। **'क्या टी०वी० व समाज हमारे बच्चों को बिगाड़ रहा है ?'** बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं चिन्तन से भरपूर विषय बनाने पर जोर दिया गया है। पाँचवें अध्याय में **'बच्चे का दृष्टिकोण कैसे बने'** बिना दृष्टिकोण के बच्चे का निर्माण ढुलमुल बन कर रह जाता है। जैसी-दृष्टि वैसी सृष्टि, दृष्टि कैसे पवित्र बनायी जाती है, इस पर बल दिया गया है। ऐसी पवित्र दृष्टि वाला मनुष्य कैसा होगा ? **'उसका स्वरूप और कसौटी'** छठे और अन्तिम अध्याय में दी गयी है। क्या मनुष्य का जीवन एक पुष्प भी भाँति सुगन्धित तथा फल की तरह पौष्टिक बन सकता है ? उसके लिए आवश्यक सामग्री प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

इस पुस्तक को प्रत्येक युवक के पास पहुँचाने का संकल्प है। इसलिए भाषा अत्यधिक सरल और मधुर बनाई गई है। विषय बहुत गम्भीर होने से त्रुटियाँ रहना सम्भव है। परन्तु सहृदय पाठकों से यह आशा रखता हूँ कि वे इसे एक छोटा सा प्रयास मानकर अपने हृदय से लगाकर मेरी त्रुटियों और अपने अनुभवों से मुझे अवगत करायेंगे। मैं उन सभी का हृदय से आभारी रहूँगा। यदि किसी एक को भी मेरे इस छोटे से प्रयास से लाभ पहुँचा तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा। इसका श्रेय अपनी सहधर्मिणी निर्मला जी को देता हूँ जिनके विचारों प्रेरणा व सहयोग से मुझे लिखने का साहस हुआ।

श्रद्धेय स्वामी अनन्त भारती जी ने अमूल्य मार्गदर्शन दिया है। मैं श्रद्धावनत उन्हें प्रणाम करता हूँ। डॉ० वेदव्रत जी 'आलोक' मेरे योग गुरु जिनका निर्देशन सदैव मेरे साथ रहता है, सादर स्मरण करता हूँ। सभी अनुभवी वैद्यों, डॉक्टरों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता

हूँ जिनके अमूल्य परामर्श से शंकाओं का समाधान प्राप्त हुआ। श्री गिरिलाल जी गुप्ता, प्रभु की आसीम कृपा में हमारे अनन्य सहयोगी, आदर के पात्र सदैव स्मरणीय है। प्रखर–प्रबुद्ध विद्वान् श्री विश्वदेव जी शास्त्री हमारे शुभचिन्तक है हम उनके आभारी है। जे०डी० कंम्प्यूटर का भी आभारी हूँ जिसके अथक परिश्रम से यह कार्य सम्पन्न हो सका।

आपका शुभेच्छु
डॉ. देवशर्मा वेदालंकार

A-1/48, सेक्टर 6
रोहिणी, दिल्ली-110085
दूरभाष : 7056240

1

बच्चे की शिक्षा कब से प्रारम्भ हो?

जन्म से न्यूनतम सोलह वर्ष पूर्व

संसार का सब से प्राचीन ग्रन्थ 'ऋग्वेद' माना जाता है। उसमें मनुष्य को आदेश दिया गया है* कि **'मनुष्य बन, और दिव्यजन-दिव्य गुणों से ओत-प्रोत मनुष्य को जन्म दे।'** इससे पता चलता है कि मनुष्य का उत्तरदायित्व क्या है? क्या वह अपनी जिम्मेदारी समझता है ? और यदि समझता है तो उसके लिए वह क्या करता है ? केवल अभाव, दरिद्रता, अज्ञानता को ही जन्म देता है, फिर चाहे वह ज्ञान का अभाव हो या धन का। धन के अभाव से इतनी हानि नहीं होती है जितनी ज्ञान के अभाव से। **इसलिए आदि सृष्टि से आज पर्यन्त जितने भी ऋषि-महर्षि हुए, उन सभी ने मनुष्य के निर्माण पर सब से अधिक बल दिया है।** निर्माण की चर्चा करते हुए सब से पहले बच्चे की शिक्षा पर विचार करते हैं।

सामान्यतया हम यह जानते हैं कि जब बच्चा तीन या चार वर्ष का हो जाता है, तब उसे शिक्षा के लिए किसी स्कूल या गुरुकुल में भेजना चाहिए। परन्तु प्राचीन और नवीन मनोवैज्ञानिकों का यह मानना है कि बच्चे की शिक्षा उसके जन्म से 4 व 5 वर्ष के भीतर पूर्ण हो जाती है।[1]

उनका मानना है कि 4 वर्ष की अवस्था तक बच्चे की ग्रहण शक्ति इतनी प्रबल होती है कि वह अपने सामने आने वाले प्रत्येक विषय, संस्कार व व्यवहार को अति शीघ्रता से सीख जाता है। इस अवस्था में बच्चा जो कुछ सीख लेता है, वह उसकी रुचि बन जाती है।

जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता चला जाता है वैसे-वैसे उसकी रुचियाँ भी बड़ी होने लगती हैं।

उन रुचियों को छुड़ाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। ऐसा अनुभवी लोगों का मानना है। जैसे—हठी, जिद्दी, क्रोधी, सहनशील, धैर्यवान्, सुशील आदि। इसके परिणाम आगे चलकर हमें देखने को मिलते हैं। हम समझते हैं कि स्कूल, कालेज, गुरुकुल में जाकर बच्चा सुधर जाएगा या उसका निर्माण हो जाएगा। इससे हमें निराशा ही हाथ लगती है। क्योंकि चार वर्ष तक उसकी जो **नकारात्मक** रुचि बन गई वह **सकारात्मक** परिणाम नहीं प्राप्त होने देगी।

बच्चे की शिक्षा, उस के जन्म होने से न्यूनतम 16 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हो जाती है। इसका अभिप्राय है—

आयुर्वेद के अनुसार बच्चे को जन्म देने के लिए स्त्री का शरीर कम से कम 16 वर्ष की आयु में परिपक्व होता है तथा पुरुष का 25 वर्ष में।[2] बच्चा माता-पिता की क्रिया प्रतिक्रिया की प्रतिच्छाया होता है।[3] बच्चे की शिक्षा, माता-पिता की शिक्षा[4] पर आधारित होती है तथा जो वंशानुक्रम से बच्चे में अपने आप आ जाती है।

शंका—जब बच्चा गर्भ में आ जाता है तो तब से ही उसे शिक्षित कीजिए, फिर न्यूनतम 16 वर्ष कहने का क्या औचित्य है?

समा०— अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि जब व्यक्ति किसी भी व्यसन का आदी हो जाता है तो उसे छोड़ने में कठिनता आती है। मान लीजिए एक दम्पती को कहा जाए कि इस नौ महीने की अवस्था में आप क्रोध न करें, क्या वे क्रोध छोड़ पाते हैं......?

क्यों नहीं छोड़ पाते? क्योंकि आदी हैं 16या 17 वर्षों से क्रोध करने की आदत बनी हुई है। झूठ बोलने की आदत बनी हुई है, हठी हैं। जिद्दी हैं, इसलिए ऐसा कहा जाता है कि जो महिला आज माँ बनने जा रही है, वह बचपन से ही अपने अन्दर किसी भी प्रकार के अवगुण या बुरी आदतें न आने दे। माता-पिता, गुरु, परिवारी जन भी इस बात का पूरा ध्यान रखें, नहीं तो आपकी आदतें (अच्छी-बुरी) बच्चे में आ जायेंगी। इसलिए न्यूनतम 16 वर्ष कहा जाता है।

शंका– आपके ऐसा कहने में क्या प्रमाण है।

समा०– महर्षि दयानन्द ने अपने महान् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के द्वितीय समुल्लास में शतपथ ब्राह्मण के वचनों को उद्धृत किया है। जो इस प्रकार है–**मातृमान्-पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद।**

बच्चे के निर्माण में तीन गुरु सहायक होते हैं– (1) माता (2) पिता (3) आचार्य।

सब से पहला गुरु माँ को माना जाता है और उसकी विशेषता कही गयी है[५] **'माता निर्मात्री भवति'**=माँ निर्माण करने वाली होती है। अब इस निर्मात्री माँ का स्वरूप कैसा होना चाहिए? उसको कहा गया है– **'प्रशस्ता धार्मिकी विदुषी माता विद्यते यस्य स मातृमान्।'** मातृमान् का अर्थ है– माँ वाला। जिस बच्चे की माँ प्रशस्ता हो, धार्मिकी हो, विदुषी भी हो, वही बच्चा माँ वाला बच्चा होगा।

माँ का स्वरूप

हम ने भगवान् को तो नहीं देखा परन्तु माँ को जरूर देखा है। भगवान् के कुछ कार्यों की समानता माँ के कार्यों में देखने को मिलती है। भगवान् को 'हिरण्यगर्भ' कहा गया है। क्योंकि संसार में जो कुछ भी जड़-चेतन है वह सब कुछ भगवान् के गर्भ में है। इसलिए भगवान् जीवों के इतने निकट है कि वह उसकी प्रत्येक धड़कन को प्रत्येक क्षण सुनता है। माँ भी अपने गर्भ में अपने बच्चों को धारण करती है और उसी प्रकार उनकी धड़कन को सुनती है, कोई ऐसा कार्य नहीं करती है जिस से उस के बच्चे को कष्ट पहुँचे।

भगवान् का स्वरूप जहाँ सहनशील है, वहाँ रुद्र भी है अर्थात् रुलाने वाला भी है। यदि भगवान् के बच्चे हम सही मार्ग पर नहीं चलते तो वह थोड़ा कष्ट देकर हमें सुधारना भी चाहते हैं। जहाँ माँ को सहनशीलता की मूर्त्ति कहा गया है वहाँ उसे दुर्गा कहकर भी पुकारा गया है। माँ जिस को ममता के आंचल में स्थान देती है उस को दण्ड देकर सुधारने का प्रयास भी करती है।

लोगों ने भगवान् की शक्ति को माँ में ढूँढ़ने का प्रयास किया है और जगह-जगह माँ के मन्दिर बना कर पूजा प्रारम्भ कर दी है।

कहीं दुर्गा के रूप में, तो कहीं वैष्णो देवी के रूप में शक्ति का अहसास किया और नमन किया है, परन्तु क्या हमने अपने घर रूपी मन्दिरों में बैठी हुई माँ, पत्नी, बहिन के रूप में देवी शक्ति का अहसास किया ? उस के सम्मान की रक्षा की ? उस से तो पढ़ने का अधिकार भी छीन लिया, नरक का द्वार भी बता दिया, ताड़न का अधिकारी तक कह डाला—। धन्य हैं महर्षि दयानन्द जिन्होंने आकर पुनः इसके मान-सम्मान एवं शक्ति की रक्षा की और कहा—**''अशिक्षित माँ कैसे शिक्षित बच्चे को जन्म दे सकती है।''**

उन्होंने कहा, हे माँ ! तू तो ब्रह्मा है। भगवान् भी तो ब्रह्मा है क्योंकि निर्माण करता है। माँ भी निर्माण करने वाली है। इसलिए वह भी ब्रह्मा है।[६]

परन्तु आज फिर ऐसा लगता है कि हे नारी जाति ! तू अपना स्वरूप भूल गयी है, अपनी शक्ति से अपरिचित हो गई है। आज तेरे बेटे किस मार्ग पर चल पड़े हैं, अपनी हानि अपने ही हाथों कर रहे हैं। क्या यह तेरे आशीर्वाद का फल है ? लगता है आज तेरे आशीर्वाद की शक्ति कम हो गई है। क्या वह तेरा आशीर्वाद नहीं था जिससे पाण्डव विजयी हुए थे ? क्या तेरे आशीर्वाद के अभाव में दुर्योधन पराजित नहीं हुआ था ? क्या वह तेरा तेज नहीं था जो छत्रपति शिवा जी मरहठा बन कर छलका ? क्या सुभाष चन्द्रबोस, सरदार भगतसिंह, रामप्रसाद बिस्मिल तेरी सन्तानें नहीं थीं ? फिर आज क्यों कायर पुत्रों को जन्म देकर इस पृथिवी का बोझ बढ़ा रही हो।

यदि जाग सको तो जागो और अपनी आन, मान, शान पर मर मिटने वाले पुत्र और पुत्रियों का निर्माण करो, क्योंकि तुम ब्रह्मा हो, प्रशस्ता हो। समाज में फैली बीमारी की डॉक्टर हो इलाज करने वाली हो।[७]

प्रशस्ता

ऐसी माँ जो अपने ऊपर और परिवार के ऊपर आये हुए संकटों में अपने आप को ठीक रख सके, विना विचलित हुए आई हुई मुसीबत

को शान्त कर सके। परिवार को टूटने बँटने से बचा सके। समाज का मार्गदर्शन कर सके। ऐसे कुछ प्रशंसनीय गुणों वाली माँ को प्रशस्ता कहा गया है।

धार्मिकी

''धर्मस्य निर्व्याजता'' धर्म वही है जो निर्व्याज हो। व्याज कहते हैं छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष को। इन से रहित व्यवहार ही धर्म कहलाता है। ऐसी माँ जिसके जीवन में यह सब दोष नहीं है। वह धार्मिकी कहलाएगी।

विदुषी

स्वाध्याय करने वाली और अधिक से अधिक आयुर्वेद आदि विषयों का ज्ञान रखने वाली स्त्री विदुषी होती है।

क्या कोई स्त्री नौ महीने या एक, दो वर्ष में प्रशस्ता बन सकती है? इसके लिए जीवन की शुरुआत से ही विचार करना पड़ेगा।

दूसरा उदाहरण हम गोत्र-परम्परा से लेते हैं। हमारे पूर्वज विवाह सम्बन्ध करते समय लड़की की माँ के गोत्र पर विशेष ध्यान देते थे। वे 6 पीढ़ियों तक निरीक्षण करते थे। कहीं किसी पीढ़ी में कोई रोग, दुर्व्यसन न रहा हो। जो कि आनुवंशिक चरित्र बन कर बच्चे में न आ जाये। आज इन बातों पर कम ध्यान दिया जाता है। इसलिए न्यूनतम 16 वर्ष पूर्व कहने में ये प्रमाण द्रष्टव्य हैं।

शंका– क्या बच्चे के निर्माण की सारी जिम्मेदारी माँ की ही है ? पिता की नहीं।

समा०– बच्चे के निर्माण में माता-पिता दोनों ही उत्तरदायी हैं। परन्तु माता की जिम्मेदारी बढ़ जाती है। जितना अधिक सान्निध्य व समीपता माँ दे सकती है पिता नहीं। गर्भ स्थापित होने के बाद बच्चे और माँ की धड़कन एक हो जाती है। इसलिए पिता से अधिक माँ की जिम्मेदारी बढ़ जाती है।

प्राचीन साहित्य में माँ के अनेक गुण बताये गये हैं। जैसे– सौम्यता, सहनशीलता, वामांगी (नाक के बाँयें स्वर चन्द्र से उत्पन्न

होने वाली) जो शान्ति, शीलता प्रदान करने वाला है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे प्रकृति ने इसे ये सारे गुण दे दिये हैं—क्योंकि इसे निर्माण जो करना है। इसलिए कभी भी इसका निरादर-अपमान नहीं होना चाहिए।[८] जहाँ इसका सम्मान होता है—(अर्थात् सही माने में शिक्षित किया जाता है) वहाँ देवता लोग जन्म लेते हैं। जहाँ ऐसा नहीं होता वहाँ सारी क्रिया निष्फल हो जाती है, क्योंकि वहाँ निकम्मे, अज्ञानी, अहंकारी, दब्बू किस्म के बच्चे पैदा होने लगेंगे। जिससे समाज का पतन शीघ्र हो जाएगा।

पिता का स्वरूप

जो रक्षा कर सके वह पिता होता है। (यः पाति स पिता)। परिवार की आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक तीनों प्रकार से रक्षा कर सके। आर्थिक तो लगभग सभी कर रहे हैं, परन्तु सामाजिक व आध्यात्मिक कोई नहीं कर पा रहा है। क्यों ? क्योंकि ऐसा करने के लिए स्वयं का निर्माण करना पड़ेगा। स्वयम् अपने को बुराइयों से बचाना पड़ेगा। जो विना स्वाध्याय सत्संग के सम्भव नहीं। यदि आप स्वाध्याय नहीं करते, तो आपका व्यक्तित्व नहीं बन पायेगा। इसलिए पिता भी उतना ही जिम्मेदार है जितनी माँ।

पिता के रूप में हम सभी जनक हैं। भगवान् को भी जनक कहा गया है क्योंकि वह जन्म देने वाला है। उसी प्रकार प्रत्येक प्राणी जनक है। प्राणियों में भी मनुष्य श्रेष्ठ प्राणी है। इसलिए श्रेष्ठ जनक भी है। श्रेष्ठ जनक होने से ही श्रेष्ठ पिता है। श्रेष्ठ जनक की कृति, रचना, सन्तान ही श्रेष्ठ हो सकती है।

आचार्य

माता-पिता के पश्चात् तीसरे शिक्षक आचार्य का नम्बर आता है। माता—पिता के द्वारा शिक्षित बच्चे की कमी को आचार्य अपने ज्ञान से पूर्ण करता है। जैसे—कुम्भकार (कुम्हार) अपने कच्चे घड़े को थोड़ा सूख जाने पर उसके अन्दर हाथ लगाकर उसको पीट-पीट सुन्दर आकृति प्रदान कर देता है। वैसे ही आचार्य शिष्य की कमियों को दूर

करके उसे आकर्षक व्यक्तित्व प्रदान करता है। जैसे—कच्चे घड़े को एक कुशल कुम्भकार की आवश्यकता होती है। ठीक वैसे ही कच्ची अवस्था में बच्चे को एक कुशल आचार्य की आवश्यकता होती है। आचार्य की परिभाषा—आचार्य वह होता है[६] जो आचरण की शिक्षा दे सके। आचार्य की प्रथम योग्यता ही आचरण की शिक्षा देना है। बच्चा कहां किस प्रकार की गलती करता है। उसे समझ कर दूर करना आचार्य की योग्यता मानी जाती है। इसलिए आचार्य शिष्य को अपने गर्भ में धारण करता है जिससे वह उसकी प्रत्येक धड़कन को सुन सके। और बच्चे को सही मार्गदर्शन दे सके।

आचार्य की दूसरी योग्यता—अर्थों का चयन करना है। आचार्य शिष्य में पदार्थों को जानने की योग्यता पैदा करता है। तथा उनसे लाभ लेना सिखाता है। ऐसी बुद्धि बना देता है जो सूक्ष्म विषयों को ग्रहण कर सके। 'आचार्य' की शिक्षा के अभाव में बच्चों का सही दिशा में विकास असम्भव है। इसलिए प्रत्येक बच्चे को आचार्य की देखरेख में रहना अत्यन्त आवश्यक है। आज जितने भी महान व्यक्ति देखने में आते हैं उन सभी के निर्माण में आचार्यों की महत्त्वपूर्ण भूमिका देखी जाती है।
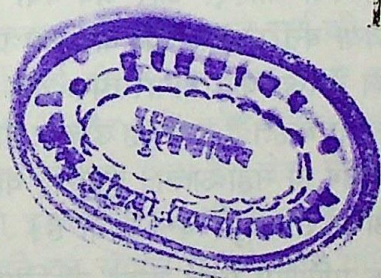
2

हम बच्चे को क्या बनाना चाहते हैं ?
(डॉक्टर, इञ्जीनियर या मनुष्य)

एक युवक कपड़ा लेकर दर्जी के पास जाता है। कपड़ा दर्जी के पास रखकर आ जाता है। अब दर्जी दुविधा में है कि उसका क्या बनाये। दर्जी उसकी शर्ट बना देता है। युवक उस कपड़े को वापस लेने जाता है तो देखता है कि दर्जी ने उसकी शर्ट बना दी है, वह दर्जी से कहता है कि उसे तो पेण्ट चाहिए थी आपने तो शर्ट बना दी।

हमारी मौलिक भूल भी यही है कि हम निश्चय ही नहीं कर पाते हैं कि हमें क्या चाहिए? और जब पैदा हो जाता है तो हम सोचते हैं कि यह क्या बन गया ? एक बात का प्रभाव हमारे ऊपर देखा जाता है। समाज में जिसका व्यापार ठीक चल रहा है हम भी अपने बच्चे को वह ही बनाना चाहते हैं चाहे वह डॉक्टर हो या इञ्जीनियर। मनुष्य बनाने का तो विचार ही नहीं आता। इसलिए वह मनुष्य ही तो नहीं बन पाता है और अन्य सब कुछ बन जाता है।

ठीक परिणाम प्राप्त करने के लिए हमें और सूक्ष्मता से विचार करना होगा। जब एक युवक और युवती विवाह सम्बन्ध में बँध जाते हैं तो पति अपनी पत्नी के पास जाता है, पत्नी पूछती है क्या चाहते हो?

पति–सन्तान।

पत्नी–कैसी सन्तान ?

पति–यह तो मैंने सोचा ही नहीं।

पत्नी– तुम इतना बड़ा निर्माण करने जा रहे हो और कहते हो सोचा ही नहीं।

अत्यन्त विचारणीय

(1) क्या एक पल का एक छोटा सा विचार हमारे जीवन को स्वर्णिम बना सकता है?

(2) क्या एक क्षण की भूल इस समाज को पतन की ओर नहीं ले जा रही है?

शंका–हमें क्या चाहिए?

समा०–वैदिक साहित्य में इस प्रश्न का उत्तर दिया गया है[१०]– मेरे पुत्र शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले हों और मेरी बेटी विराट् स्वरूप वाली हो।

पति–क्या अपने पुत्रों को लड़ाकू बनाना चाहती हो?

पत्नी–नहीं बाहर के शत्रुओं से भय नहीं है अन्दर के शत्रुओं से है जो कभी भी मनुष्य को पराजित कर देते हैं। अन्दर के शत्रु हैं- काम-क्रोध, लोभ-मोह, ईर्ष्या-द्वेष आदि इन सभी पर विजय प्राप्त करने वाला हो।

मेरी पुत्रियां विराट् स्वरूप वाली हों। विराट् सूर्य की एक अवस्था विशेष है। जिस समय सूर्य पूर्ण यौवन पर होता है तो हमारी आँखें उसे देखने में असमर्थ होती हैं और यदि कोई देखने का दुस्साहस भी करता है तो चुधियाँ जाने का भय होता है। उसी प्रकार मेरी पुत्री का स्वरूप भी देदीप्यमान हो, इतनी ओजस्विनी, तेजस्विनी हो कि पहले तो कोई बुरी नजर से देखने का साहस न करे और यदि दुस्साहस करे भी तो उसकी आँखें चुधियाँ जाएँ। ऐसे स्वरूप वाली सन्तान मुझे चाहिए।

पति–तो क्या हमें अपने बच्चों को डॉक्टर, इञ्जीनियर नहीं बनाना चाहिए?

पत्नी–अवश्य बनाना चाहिए, परन्तु सर्वप्रथम उसे मनुष्य तो बन जाने दीजिए। डॉक्टर, इञ्जीनियर भी बन जाएगा, और यदि मनुष्य

बने विना ही वह इञ्जीनियर, डॉक्टर, एडवोकेट बन गया तो वह स्वयं ही बीमार हो जाएगा, और सारे समाज को रोगी बना देगा। परिणाम हमारे सामने है।

प्राचीन समय में जब एक पिता पुत्र को विद्यालय (गुरुकुल) में विद्या प्राप्ति के लिए छोड़ने जाता था तो आचार्य (प्रिन्सिपल) का प्रश्न होता था कि हम इसे न डॉक्टर बना सकते हैं न ही इञ्जीनियर। तब पिता का उत्तर होता था, आप इसे मनुष्य बना दीजिए। डॉक्टर, इञ्जीनियर तो यह स्वयं बन जाएगा।

प्रश्न योजना का है। हमारे अधिकतर कर्म योजनाबद्ध होते हैं परन्तु विवाह और सन्तानों का जन्म योजना रहित होते हैं।

पति–हमारे विवाह तो योजना से होते हैं फिर ऐसा कहने से आपका क्या अभिप्राय है ?

पत्नी–हाँ ठीक है, विवाह में योजना होती है ? इतने लोग आयेंगे, ये-ये खायेंगे, फलां-फलां सामान लेना देना होगा। परन्तु योजना किसकी होती है- दु:ख के साथ कहना पड़ता है कि **जिनका विवाह होना है वे इस पवित्र बन्धन के विषय में क्या विचार रखते हैं ? क्या उनकी तैयारी है ? उनकी कोई योजना है ? शायद नहीं।**

पति–तो क्या सारे कार्य छोड़कर एकमात्र इसी की तैयारी में लग जाएँ ?

पत्नी–कार्य छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता केवल दृष्टिकोण बनाने की है। एक माता-पिता जिस के लिए उम्र भर कठिन से कठिन परिश्रम करते रहे, वह इतना भी सक्षम नहीं हो सका कि उसे संभाल भी सकें। इतनी सारी सुख-सुविधाएँ मनुष्य के लिए पैदा कर दी गयी हैं, फिर भी वह दु:खी क्यों ? एक क्षण के लिए अपनी सारी गतिविधियों, क्रियाकलापों को रोककर थोड़ा विचार तो करें। हमें क्या बनाना था ? और हम क्या बनाते रहे ?

3

हम बच्चे का निर्माण कैसे करें ?

'किसी वस्तु को क्रमशः नियमानुसार, व्यवस्थानुसार स्थापित करना **निर्माण** कहलाता है।' जैसे– भवन-निर्माण, मन्दिर-निर्माण। भवन या मन्दिर बनाने में एक-एक ईंट को क्रमशः स्थापित करते हैं। बच्चे के निर्माण में भी गुणरूपी ईंटों को समय-समय पर स्थापित करना पड़ता है। पर्वत को बनाया नहीं जाता है स्वयं बन जाता है, परन्तु मन्दिर या भवन को बनाया जाता है। वह अपने आप नहीं बनेगा। झाड़-झंखाड़ को उगाया नहीं जाता अपितु उग जाते हैं परन्तु अच्छे पौधों को तो समय-समय पर खाद, पानी व देखभाल की आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया को ही निर्माण कहते हैं।

हम ने बहुत सारे विद्वानों को खोजने का प्रयास किया जो हमें 'निर्माण' के विषय में बता सकें। उन सभी में एक तपस्वी महर्षि दयानन्द सरस्वती मिले, जिन्होंने अपने ग्रन्थ संस्कारविधि में बताया है कि **'हम जैसी सन्तान चाहें प्राप्त कर सकते हैं'** बच्चों के निर्माण के लिए आवश्यक है कि हम उन्हें संस्कारित करें। जैसा बच्चा चाहिए वैसा ही संस्कार दें।

शंका–संस्कार किसे कहते हैं ?

समा०–संस्कार का अर्थ वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य समाज में रहने योग्य बन पाता है।

शंका–क्या संस्कारों के विना मनुष्य समाज में रहने योग्य नहीं बन पाता है ?

समा०–शायद नहीं, संस्कारों के अभाव में ही आज का मनुष्य

सब कुछ रहते हुए भी दुःखी है। संस्कारों से मनुष्य की आत्मा बलवान् तथा मन शुद्ध एवं पवित्र बनता है और उसमें गुणों की वृद्धि होती है।

शंका—संस्कार की परिभाषा सरल करके समझाइये।

समा०—जैसे एक माँ बाजार से शाक सब्जी खरीद कर लाती है। क्या उसको ऐसे ही पकाकर रख देती है? नहीं, उसको बीनती है, धोती है, काटती है, फिर उसमें आवश्यकतानुसार मसाले ड़ालकर स्वादु व्यञ्जन तैयार कर देती है। इसी का नाम संस्कार है।

एक माली समय-समय पर अपने पौधों की काट-छाँट करता है। इससे उसका बगीचा आकर्षक लगने लगता है, ये कटिंग करना ही संस्कार करना है। यह संस्कार भी छोटे-छोटे पौधों का ही होता है। जो पेड़ बन गए हैं उन्हें आकृति में ढालना कठिन होता है।

शंका—जापान में तो कोई संस्कार नहीं करता है।

समा०—वहाँ भी करते हैं। प्रक्रिया में अन्तर है। हम कर्मकाण्ड के माध्यम से बच्चों को संस्कारित करते हैं तथा वे यह कहकर **'हमें अपने कर्त्तव्यों के प्रति ईमानदार रहना है।'** संस्कार देते हैं। यह छोटा सा संस्कार ही मनुष्यों को ईमानदार एवं कर्त्तव्य-परायण बना देता है। इतना ही नहीं और भी सभी संस्कारों की आवश्यकता वहाँ महसूस की जाने लगी है। और यदि कोई वैज्ञानिक रूप से उन्हें अपने संस्कारों की महत्ता बताये तो वे अपनाने में संकोच नहीं करेंगे।

शंका—क्या संस्कारों में भी वैज्ञानिकता है।

समा०—ऋषियों द्वारा प्रदत्त ये सभी संस्कार वैज्ञानिक ही नहीं समसामयिक भी हैं। आइये इन संस्कारों की वैज्ञानिकता की जाँच करें। सर्वप्रथम गर्भाधान संस्कार है जिस को लोगों ने अनायास हो जाने वाली प्रक्रिया मान लिया है। इसलिए इसका महत्त्व ही समाप्त हो गया है, न कोई पूर्व विचार-विमर्श है, न ही तैयारी। जबकि यह पूर्ण जानकारी व पूर्ण तैयारी से सम्पन्न होने वाली प्रक्रिया है।

शंका—पूर्ण जानकारी व पूर्ण तैयारी से आपका क्या अभिप्राय है ?

समा०—जानकारी से अभिप्राय है कौन सी रात्रियों में गर्भाधान

करना चाहिए और कौन सी में नहीं, और क्यों ?

शंका—रात्रियां तो सभी समान हैं फिर इनको क्यों अलग रखा गया है।

समा०—सामान्यरूप से देखने पर सभी रात्रियां समान दिखाई देती हैं, परन्तु प्राकृतिक रूप से समान नहीं है। जैसे—**पूर्णमासी, अमावस्या, अष्टमी, ग्यारहवीं, तेरहवीं रात्रियों में गर्भ स्थापित हो जाए तो पैदा होने वाला बच्चा अपंग होगा या दूषित रक्त वाला, रोगी पैदा होगा।** इसलिए जानकारी होना आवश्यक है।

शंका—यह महत्त्वपूर्ण जानकारी कितने लोगों को प्राप्त है ? सभी को क्यों नहीं ?

समा०—बहुत ही कम, नहीं के बराबर लोगों को इसकी जानकारी है।

सभी को इसलिए जानकारी नहीं है क्योंकि हमें बता दिया गया है कि **'बच्चे ईश्वर की देन हैं।'** इसलिए हम क्या कर सकते हैं ? जो कुछ भी हो रहा है भगवान् ही कर रहा है। हमारी सिरदर्दी समाप्त हो गई, हमारे पास करने को कुछ नहीं बचा। हमारा सारा ध्यान, सावधानी इधर से हट गयी, और दूसरे कामों में लग गयी। इस प्रकार की जानकारी न तो कोई लेने वाला और न ही कोई देने वाला रहा। हमारे घरों में कभी ऐसी चर्चा होती है ? दुनिया की जानकारी हमें होती है, हम चर्चा भी करते हैं, परन्तु जिस जानकारी पर हमारे सम्पूर्ण जीवन की आधारशिला रखी जाएगी, हमारे बच्चों का भविष्य निर्भर करेगा, समाज का निर्माण होगा, उसकी चर्चा हम नहीं करते हैं। यदि करते हैं तो चोरी-छिपे। बहुत से लोगों ने खोज की है, निष्कर्ष पर भी पहुँचे परन्तु वह जानकारी सामान्य लोगों तक नहीं पहुँच पायी। हमारा यह प्रयास होगा—

''शक्ति एवं सामर्थ्य के अनुसार अधिक से अधिक लोगों तक यह जानकारी पहुँचे।''

आज भी समाज की भलाई में सहयोग कर सकते हैं, यदि आप विवाहिता हैं तो बहनें कम से कम दस बहनों तक इस जानकारी को

पहुँचा सकती हैं, इसी प्रकार पुरुष भी। यदि आप वृद्ध हैं तो पारिवारिक सत्संग के माध्यम से, वे सभी लोग जो कुछ करने में विश्वास रखते हैं, कर सकते हैं। आपकी सहायता से एक उपयुक्त परिणाम पर पहुँचा जा सकता है। इस से आपको या आपके आस-पास जो भी लाभ या हानि हो, हमें अवश्य सूचित करें। तभी समाज के सामने एक सही आईना प्रस्तुत कर सकते हैं।

शंका–इस जानकारी के अभाव में तो बड़ा अनिष्ट हो रहा है, परन्तु ऐसा क्यों होता है ?

समा०–सभी रात्रियां समान नहीं हैं। प्राकृतिक भूगोल-विद्या (फिजिकल जियोग्राफी) के पश्चिमी विद्वान् भी मानते हैं कि इन रात्रियों में जल का स्तर घटता बढ़ता रहता है। पूर्णमासी और अमावस्या को समुद्र तल पर जल का स्तर बढ़ता है जिस का शरीर पर प्रभाव पड़ता है। प्राचीन विद्वानों का मानना है कि चन्द्रमा रस को उत्पन्न करता है, जिसका जल पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और न केवल जल वृद्धि लाता है अपितु वनस्पतियों में रस और जलस्तर घटता है इसलिए मनुष्य शरीर के रक्त व रस में ह्रास होने से निर्बलता रहती है। अर्थात् पूर्णमासी व अमावस्या को मनुष्य का रक्त विषम दशा को प्राप्त हो जाता है। **इन तिथियों पर यदि गर्भ रह गया तो बालक के रक्त आदि दोषयुक्त होंगे।**

गर्भाधान के लिए उपयुक्त रात्रियां एवं समय- स्वाभाविक रूप से गर्भ स्थापित होने का समय 16 रात्रियाँ हैं। ये रात्रियाँ हैं–मासिक धर्म से 16वीं रात्रि तक।

1. इसमें भी प्रथम छः रात्रियाँ छोड़ देनी चाहिए।

2. यदि पूर्णमासी, अमावस्या, अष्टमी तिथियाँ आएं तो उन्हें भी छोड़ देना चाहिए।

3. ग्यारहवीं व तेरहवीं रात्रि (मासिक धर्म शुरू होने से) छोड़ देनी चाहिए।

शेष रात्रियां गर्भाधान के लिए उपयुक्त समय है। इन सब की जानकारी एवं सुविधा के लिए महिलाओं को कलेण्डर पर निशान लगा

कर रखना चाहिए या डायरी में नोट करके रखना चाहिए।

समय—रात्रि 12 बजे से लेकर 4 बजे तक का समय उपयुक्त समय माना गया है।

रात्रिगणना का नियम

प्रत्येक स्वस्थ स्त्री को महीने में एक बार मासिक-धर्म आता है। यही समय गर्भ धारण का होता है। पुत्र एवं पुत्री के लिए सही तिथियों का ज्ञान आवश्यक है कि कौन सी रात्रि पुत्र के लिए तथा कौन सी पुत्री के लिए निर्धारित है। 'सम' रात्रियाँ पुत्र के लिए तथा विषम रात्रियाँ पुत्री के लिए होती हैं। 8, 12, 14, 16 रात्रियाँ सम कहलाती हैं और 7, 9, 15 विषम रात्रियाँ होती हैं।

इन रात्रियों का महत्त्व तभी तक है जब तक कि इनकी गणना का नियम मालूम हो। और गणना का नियम भी ऐसा हो जिसमें भ्रम पैदा न हो सके। ज्योतिष के अनुसार तिथि निर्धारण सूर्योदय से मानी जाती है। इसलिए सूर्य निकलने के एक घण्टे बाद से लेकर दूसरे दिन के सूर्य निकले के एक घण्टे पहले तक लगभग 22 घण्टे का समय एक रात्रि मानी जाएगी। यदि इस 22 घण्टे के समय दिन में या रात्रि में मासिक धर्म आता है, तो वह पहली रात्रि मानी जाएगी।

उदाहरण- (1) जैसे किसी महिला को सुबह सूर्य निकलने से एक घण्टा पश्चात् या दोपहर 12 बजे या सायं 6 बजे या रात्रि 10 या 12 बजे या सुबह 4 बजे तक मासिक धर्म आता है, तो यह पहली रात्रि ही मानी जायेगी।

(2) यदि किसी मास में भ्रम हो तो उसको छोड़कर अगले मास को लेना चाहिए। जैसे यदि किसी महिला को सूर्य निकलने के 30 मिनट पहले या 30 मिनट बाद हो तो उसे छोड़ देना चाहिए। यदि मासिक धर्म नियमित न हो तो पहले उसे नियमित करें और शुद्ध करें।

'सन्तानोत्पत्ति' = सन्तान को जन्म देना, मनुष्य जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग तथा कर्तव्य है। सब चाहते भी हैं कि वे अपनी इच्छा के अनुसार लड़के व लड़की को जन्म दें। परन्तु ऐसा बहुत कम हो

पाता है। इसके विपरीत अधिक हो जाता है, हम चाहते हैं पुत्र हो, हो जाती है पुत्री। हम चाहते हैं पुत्री हो, हो जाता है पुत्र। इस मनोवृत्ति के कारण बेटे में बेटी का और बेटी में बेटे का स्वभाव आ जाता है। इसका कारण है कि हम बेटे को अधिक चाहते हैं। माँ के पेट में बेटी पल रही होती है परन्तु भ्रम से विचार लड़के के प्रति होते हैं, ऐसी लड़की में लड़कों का स्वभाव पाया जाता है। उसके सभी काम लड़कों की तरह पाये जाते हैं। वैसे ही लड़कों के विषय में भी होता है।

कई बार लड़कियाँ ही लड़कियाँ पैदा होती रहती हैं। हम लिंग परीक्षण के द्वारा पता लगा लेते हैं यदि लड़की होती है तो गर्भपात करा देते हैं, जो महा पाप है। जिसके कारण लड़कियों का अनुपात लड़कों से बहुत कम रह गया है। ये सारी परेशानियाँ हैं जिनका हमें सामना करना पड़ता है। इन सभी समस्याओं का सौ प्रतिशत समाधान है। परन्तु जानकारी का अभाव है, इसलिए जैसा चाहते हैं कर नहीं पाते।

महत्त्वपूर्ण – हमें शारीरिक व मानसिक रूप से स्वयं को तैयार करना होगा। और जो खान-पान में हमारी बुरी आदते हैं उन्हें छोड़ना होगा। एक बात विशेष रूप से समझ लीजिए हम जो कुछ भी खाते हैं उसका रस बनता है और उसी से वीर्य बनता है। जैसी हमारी सोच होगी वैसी ही वीर्य की प्रकृति (नेचर) बनेगी और वैसी ही सन्तान का निर्माण होगा। मान लीजिए आप तम्बाकू खाते हैं वह आपकी भूख बन गयी। जब आपका बच्चा पैदा होगा उसकी भी स्वाभाविक रूप से वैसी ही भूख होगी। इसलिए गर्भाधान करने से पहले अपने शरीर को, अपने मन को, अपने रज वीर्य को शुद्ध कीजिए।

यदि आप परिवार के साथ रहते हैं तो परिवार के सभी सदस्यों को समझाना होगा कि वे सभी सहयोग करें और बच्चे से सम्बन्धित चर्चा अधिक करें। तनाव, अशान्ति आदि का वातावरण न पैदा करें।

आज हमारे खान-पान, रहन-सहन का स्वरूप बिगड़ गया है। आंकड़े बताते हैं कि पुरुषों के वीर्य में शुक्राणुओं की संख्या में

चालीस से पचास फीसदी की गिरावट आई है।

सन् 1992 में नील्स ई. ने स्केक ब्रिटिश मेडिकल जनरल में प्रकाशित रिपोर्ट के मुताबिक तनाव, नशे व ड्रग्स के सेवन से शुक्राणुओं की संख्या में जबरदस्त गिरावट आयी है। 1940 में की गई गणना के अनुसार एक स्वस्थ पुरुष के प्रति एक मि०ली० वीर्य में 113 मिलियन शुक्राणु थे, जो सन् 1992 में कम होकर महज 66 मिलियन ही रह गए। हम अनुमान लगा सकते हैं कि अगले 50 वर्षों में यह संख्या घटकर 1/4 रह जाएगी। इसलिए तैयारी की आवश्यकता है। इस तैयारी के विषय में 'चरक' कुछ बातें बताते हैं। जो इस प्रकार हैं[११]–

- स्त्री पुरुष के रज वीर्य के दोष रहित करने की आवश्यकता है।
- मासिक धर्म के पश्चात् शुद्ध होकर आठ दिन तक प्रसन्न, शान्त व पवित्र रहें। पौष्टिक भोजन करें।
- जैसी सन्तान की इच्छा हो वैसे ही शुभ संस्कार स्त्री के मन में धारण करें और वैसा ही आचरण करें।

धातु शुद्धिकरण

श्रेष्ठ रज-वीर्य से ही श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न होगी।

(1) **औषध सेवन**- अश्वगन्ध, शतावर, मुलहठी, सौंफ, का चूर्ण बराबर मात्रा में लेकर तीन–तीन ग्राम सुबह शाम गिलोय, ब्राह्मी, सोंठ मिले दूध के साथ ले।

(2) **सात्त्विक आहार**- गाय का दूध व घृत, दाल-मूंग, उड़द, चावल, जौ, बादाम ताजे फल आदि।

(3) मानसिक विकारों को छोड़ना और प्रसन्न रहना है। भय, शोक, क्रोध आदि मानसिक विकार यत्न से छोड़ने चाहिए।

(4) गृहस्थाश्रम में ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। गर्भाधान करने से पूर्व आप जितने अधिक दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक रहेंगे उतनी ही सम्भावना अच्छी सन्तान के जन्म की है।

पुत्र-उत्पत्ति-उपाय

पुत्र पिता का उत्तराधिकारी होता है। पिता के पश्चात् उसकी सारी सम्पत्ति का स्वामी होता है। चाहे वह धन-सम्पत्ति हो या आदर्श, मर्यादा या सद्गुणों की सम्पत्ति हो। इसी को लोग दूसरे शब्दों में भी प्रस्तुत करते हैं। जैसे 'घर का चिराग' 'वंश की बेल को बढ़ाने वाला' 'माता-पिता को स्वर्ग दिलाने वाला' आदि। वास्तव में देखा जाए तो यह सही है। पुत्र पिता की सत्य प्रतिलिपि (True Copy) होता है। उसके अरमानों का प्रतिबिम्ब होता है। वह उसमें कोई कमी नहीं देखना चाहता है, अपने से बढ़कर गुणी देखना चाहता है। यदि पीढ़ी दर पीढ़ी सुधार की भावना से बच्चे का जन्म होता है तो उसमें कमी की गुंजाइश नहीं रहती है।

इस समस्या का समाधान भी है। समाधान भी अत्यन्त सरल है। जैसे–

1. विचार, संकल्प और उसके अनुसार आचरण तथा खान-पान।
2. माता-पिता, गुरुजन तथा भगवान् का आशीर्वाद।
3. रात्रियों का चुनाव

लड़के के लिये 8, 10, 12, 14, 16 ये पांच रात्रियां हैं।[१२]

यदि आठवीं या दसवीं रात्रि में गर्भ स्थापित होता है तो अच्छा पुत्र होगा, परन्तु श्रेष्ठ नहीं। यदि 12, 14 में पुत्र होगा, तो श्रेष्ठ होगा। परन्तु 16वीं रात्रि में अतिश्रेष्ठ सर्वगुण सम्पन्न बेटा पैदा होगा। परिणाम आपके हाथ में है। इन रात्रियों में प्रकृति के अनुसार पुरुषों में वीर्य पुष्ट (बलवान्) होता है अर्थात् वीर्यकीटों की शक्ति बढ़ जाती है। वे स्त्री के अण्डे से मिलने में समर्थ हो जाते हैं, जिससे लड़का पैदा होता है। ऐसा प्राचीन विद्वानों का मत है। महर्षि सुश्रुत कहते हैं कि **"पुरुष के वीर्यकीट अधिक होने से लड़का और स्त्री रज के अण्डे अधिक होने से लड़की पैदा होती है। मासिक धर्म में युगल दिनों में लड़का और एकल दिनों में सम्भोग करने से लड़की पैदा होती है। इसका अर्थ यह है कि युगल[१३] दिनों में स्त्रियों में अण्डे कम रहते हैं तथा एकल[१४] दिनों में अधिक रहते हैं।"[१५]**

डॉ० श्रीमती एम जैकब, प्रसूति एवं स्त्री-रोग प्राध्यापिका, गोवा

के अनुसार **"चिकित्सा जगत् में हो रहे अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ है कि जिन पुरुषों के वीर्य में शुक्राणु कम संख्या में होते हैं उनके यहां अधिकतर लड़कियां पैदा होती हैं। जिनके वीर्य में शुक्राणु अधिक संख्या में होते हैं उनके यहाँ अधिकतर लड़के उत्पन्न होते हैं। बेटा पैदा करने के लिए पुरुष के शुक्राणुओं की संख्या बढ़ानी चाहिए। कुछ समय संयम रखने से वीर्य के शुक्राणुओं की संख्या बढ़ जाती है।"**

प्रसिद्ध लेडी डॉ० चरनजीत घुई भी सम-विषम तिथियों को मनचाही सन्तान प्राप्त करने का वैज्ञानिक साधन मानती हैं। **"मैं निःसंकोच होकर कह सकती हूँ कि मैंने इस पद्धति का अध्ययन इंग्लैंड में अपने अध्ययन करते समय किया था, जो वैदिक दर्शन पर आधारित था। यह पद्धति 99 प्रतिशत अंशों में सफल हुई है। यह मैं अपने चार वर्ष के अनुभव के आधार पर कह सकती हूँ। मैंने स्वयं सौ केसों पर इस पद्धति का प्रयोग किया और सभी में पुत्र का ही जन्म हुआ।**

स्वर विज्ञान

सन्तानोत्पति में स्वर विज्ञान का काफी योगदान है तथा आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार युक्तिसंगत भी है। इसमें जिस समय पुरुष का सूर्य स्वर (दाहिना स्वर अर्थात् नाक के दाहिने नथुने से श्वास आना) और स्त्री का चंद्र स्वर (नाक के बाएं नथुने से श्वास आना) चल रहा हो उस समय गर्भाधान करने से लड़का होगा। इस स्थिति के उल्ट करने से कन्या की प्राप्ति होगी। ****(देखें श्लोक पेज 66 पर)*

एक जापानी विशेषज्ञ के मतानुसार **"एक गर्भवती स्त्री अपनी मानसिक शक्ति से गर्भ में भ्रूण को लड़का या लड़की बना सकती है। जैसे गर्भ ठहर जाने के दो मास के बीच कम से कम दो सप्ताह तक 'मुझे लड़का होगा' यह बात सोने के समय तक सोचती रहे तो वह गर्भवती उपयुक्त समय पर अवश्य ही लड़का पैदा करेगी।"** इस प्रकार के रिवाज से जापान में लगभग 2000 स्त्रियों में से लगभग 1940 स्त्रियों के लड़के ही पैदा हुए थे।

डॉक्टरों का मानना है कि "**जो महिलाएं अधिक नमकीन खाती हैं वह पुरुषों को जन्म देती है। लेकिन दूध, दही, पनीर, मक्खन खाने वाली महिला को अधिक लड़कियां ही पैदा होती हैं।**"

डॉ. लैंण्डरम बी० शैटल्स अपने x, y क्रोमोसोम (Chromosome) रिसर्च से भी यही सिद्ध करते हैं।

पुत्री-उत्पत्ति-उपाय

1. पुत्रोत्पत्ति में प्रयोग होने वाले प्रथम तीन उपाय।
2. रात्रि–चयन– पुत्री के लिए 7, 9, 15वीं रात्रियों में गर्भाधान करें।

महापाप 'भ्रूण हत्या' से बचाव

इस प्रकार की थोड़ी सी जानकारी से शायद हम 'भ्रूण हत्या' जैसे महा पाप से बच सकें। आइये ऐसी जानकारी हम अपने मिलने वालों तक पहुँचायें।

इस प्रकार पूर्ण रीति से ऊपर निर्दिष्ट रात्रियों में गर्भाधान करें पूर्ण सफलता प्राप्त होगी। यदि किसी कारण से गर्भ स्थापित नहीं हो पाता है तो अगले महीने में उसी प्रकार की प्रक्रिया को अपनावें। तुरन्त स्थापित गर्भ के लक्षण इस प्रकार बताये गये हैं[१६]–स्त्री के शरीर में थकावट, ग्लानि–जी मिचलाना, प्यास लगना, टांगों में शिथिलता, रज और रक्त का रुक जाना और योनि में स्फुरण होना बताया गया है। अच्छे समाज के निर्माण में आपका यह अति महत्त्वपूर्ण योगदान सिद्ध होगा और आप धन्य हो जायेंगे।

गर्भरक्षा और स्वस्थ सन्तान बनाने के उपाय

जब गर्भ स्थापित हो जाए तब दूसरे या तीसरे मास में गर्भ की रक्षा के उपाय करने चाहिए।[१७] यहां विद्वान् लोगों का मानना है कि पुरुष को तब तक पत्नी के साथ शारीरिक सम्बन्ध नहीं करना चाहिए। जब तक दूसरे बच्चे की आवश्यकता न हो। यह सच है, ऐसा कर पाना कठिन अवश्य है, परन्तु असम्भव नहीं। और फिर जब

तक बच्चा गर्भ में है, तब तक शारीरिक सम्बन्ध नहीं करना चाहिए। तपस्या से प्राप्त फल सन्तुष्टि देने वाला होता है। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो बच्चे पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा। वह कामुक प्रकृति का होगा और उसके चेहरे की आकृति भी बिगड़ सकती है। ऐसी सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

इस समय वट वृक्ष की कोमल कोंपले और गिलोय को पीस कर उसका रस कपड़े में छान कर स्त्री की दाहिनी नाक में सुंघावें तथा तीन, चार बूंदें नाक में भी डाल देवें। इसके अनेक लाभ हैं। जैसे–

वट-वृक्ष–

(1) वट-वृक्ष के प्रयोग से गर्भपात नहीं होता है।
(2) यह रक्त पित्त नाशक है। (गर्मी को शान्त करता है।)
(3) योनि दोषों को दूर करता है।
(4) गर्भ को पुष्ट करता है।

गिलोय–

(1) ज्वर, पित्त, कफ, खाज, अरुचि, वमन तथा तृषा और दाह को दूर करती है।
(2) गिलोय दस्तावर होती है। पेट की बीमारी से गर्भिणी को मुक्त रखेगी।

पहचान– दूसरे महीने में शीत और उष्ण से परिपक्व हुए महाभूतों का कड़ा संघात होकर पिण्ड सा हो जाता है। तब यदि वह गोल सा पिण्ड हो तो उसे पुत्र का गर्भ समझना चाहिए और जो लम्बा सा पिण्ड हो तो कन्या का गर्भ समझना चाहिए।

विशेष लाभ– यह नौ महीने का समय बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है परन्तु इस समय हम कुछ भी ऐसा नहीं करते हैं, जो विशेष हो। ऋषि-मुनियों के मुख से कुछ ऐसी विशेष औषधियां निकलीं, जिनका विशेष महत्त्व है। जिनमें ब्राह्मी, सोंठ, गिलोय प्रमुख हैं। ब्राह्मी, गिलोय, सोंठ इन तीनों का मिश्रण एक अनोखा टॉनिक है।

गिलोय– यह एक ऐसी औषधि है जिसके असंख्य गुण हैं। उनमें से एक गुण यह है कि यह रक्तशोधक है। खून को प्रदूषण मुक्त

रखती है। जीवनधारक शक्ति को पैदा करती है।

ब्राह्मी और सोंठ– अत्यधिक बुद्धिवर्धक औषधि है। यह इन तीनों का मिश्रण दूध के साथ मिलाकर सोमरस बन जाता है, जिस सोमरस को पीकर देवता अमर हो जाते थे। आज वही आपके बच्चे को मिल रहा है। बच्चे की शुरुआत, (उसके शरीर का निर्माण) प्रदूषण मुक्त रक्त व अवयवों से हो रहा है। महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि **'इससे सन्तान अति बुद्धिमान् रोगरहित् शुभ-गुण, कर्म स्वभाव वाले होवें।'**

औषधि	मात्रा	स्वभाव
सोंठ	2 ग्राम	गरम
ब्राह्मी	20 ग्राम	शीतल
गिलोय	10 ग्राम	शीतल
दूध	1 कि.ग्रा.	

मौसम के अनुसार सोंठ को कम अधिक कर लें। सारी औषधियों को दूध में उबाल लें फिर दूध को छानकर पीयें। दिन में 2 बार, 4 बार, 5 बार, जितना पी सकें प्रसन्नता के साथ पीयें।

पर्यावरण दूषित होने के कारण आज पैदा होते ही बच्चों को अनेक प्रकार के रोग घेर लेते हैं। जैसे– हृदयरोग, पीलिया, कैंसर, मन्दबुद्धि, अपंगता आदि।

यह सोमरस जो तीन औषधियों (ब्राह्मी, सोंठ, गिलोय) का मिश्रण है यह वास्तव में ही अमर कर देने वाला है। यदि इसका प्रयोग गर्भ के समय किया जाए तो अति उत्तम होगा। इसके अतिरिक्त जिन्होंने उसका प्रयोग उस वक्त नहीं किया वह अब कर सकते हैं। जो बच्चे अभी चार से दस वर्ष के बीच हैं और जिनका स्वभाव हठी, जिद्दी या क्रोधी है, जिन का मन पढ़ाई में नहीं लगता है, जिन को भूलने की आदत है तथा जो बीमार रहते हैं, इन औषधियों का प्रयोग दूध में उबाल कर किया जाये तो अनोखा लाभ प्राप्त हो।

इतना ही नहीं जो बड़ी उम्र के लोग हैं वे भी थोड़ी मात्रा में

इसका प्रयोग कर लाभ उठा सकते हैं। बच्चों को विना बताये ही इसका प्रयोग नियमित रूप से करायें, अत्यधिक लाभ प्राप्त होगा।

हवन करने से भी माँ-बच्चे के शरीर पर अवर्णनीय लाभ होता है। थोड़ी सी अग्नि जलाकर उसमें शुद्ध घी एवं सामग्री (मेवों सहित) की आहुति चढ़ावें। कम से कम 10 मिनट तक। जो घी शेष रहे उसे स्वयं खा लें और शरीर पर मालिश करें। आश्चर्यजनक लाभ मिलेगा। आप किसी भी मत सम्प्रदाय के हो सकते हैं परन्तु अपने बच्चे के लिये तो कर ही सकते हैं।

इसे ऋषियों ने 'पुसंवन संस्कार' माना है। किसी विद्वान् की सहायता से सम्पन्न करा सकते हैं। महर्षि दयानन्द लिखित 'संस्कारविधि' में देख सकते हैं।

बच्चे की मानसिक शक्ति का विकास

चौथे महीने में बच्चे के मानसिक अवयव और बुद्धि का विकास प्रारम्भ हो जाता है। विशेषकर मस्तिष्कीय शक्तियां विशेष बढ़ती हैं। इस मास में माँ "दोहृदी" दो हृदय वाली कहलाती है। एक हृदय बच्चे का होता है। जैसे पौधा अंकुरित हो जाता है तो उसको समय-समय पर प्रकाश व खाद-पानी की आवश्यकता होती है। वैसे ही विचारों की व संस्कारों की बच्चे को आवश्यकता होती है। तभी वह उत्कृष्ट होता है और वृद्धि को भी प्राप्त होता है। इसलिए जब शुक्ल पक्ष प्रारम्भ हो और चन्द्रमा पुण्य नक्षत्रों से युक्त हो तो उस दिन पति अपनी पत्नी को उपदेश करे और उसके बाल संवारे।

शंका—गर्भिणी के बाल संवारने से क्या अभिप्राय है ?

समा०—गर्भिणी के सिर पर कंघी करने से गर्भगत बालक के बाल भी सुन्दर कोमल बनते हैं। इस नीति से बालक के मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव पहुँचाया जा सकता है। केश संवारते समय पति पत्नी के मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव छोड़ सकता है। जब हम सिर की मालिश करते हैं तब मन एकाग्र और शान्त होता है। इसी प्रकार पति पत्नी को समझाता है कि वह अपने मस्तिष्क से उचित काम ले। वह जिस प्रकार का अवलोकन करेगी अथवा जिस प्रकार की बातों को

मन में सोचती रहेगी उसी प्रकार के **अवलोकन का उत्साह रखने वाला अथवा उस प्रकार की बातों को सोचने की योग्यता रखने वाला** बच्चा उत्पन्न होगा। सिर में पांच सन्धियां होती हैं।[१८]

पञ्चसन्धयः शिरसि विभक्ताः सीमन्ताः।
तत्राघातेनोन्मादभयचेष्टानाशैर्मरणम्।।

सिर की जो पांच संधियां बतायी गई हैं उन्हें सीमन्त कहते हैं, उनमें चोट लगने से, उन्माद से, भय से और चेष्टा नाश से मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।

इसलिए सिर की विशेष सुरक्षा रखनी चाहिए। पति स्वयं पत्नी के केशों में सुगन्धित तेल लगाये और गूलर या अशोक वृक्ष की दो शाखाएँ लेकर नाक की सीध में सिर में चलाए, माँग निकाले और जूड़ा बांध दे। यह प्यार की अभिव्यक्ति का साधन है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है

चावल, मूँग व तिल की बिना नमक की खिचड़ी बनावें। तीनों चीजों को बराबर रखें। इसमें पर्याप्त मात्रा में गाय का घी मिलायें। जिससे घी में मुँह देखा जा सके। इसमें पत्नी अपना मुँह देखे और अपने बच्चे का मुँह देखे। इस समय माँ जैसी आकृति देखेगी वैसी आकृति का बच्चा पैदा होगा।

शंका–खिचड़ी में ही मुँह क्यों देखें, दर्पण में क्यों नहीं ?

समा०–खिचड़ी में तीनों चीजें पौष्टिक एवं सात्त्विक हैं। जिसका अभिप्राय है कि गर्भ पुष्ट होना चाहिए। दर्पण में मुँह देखना सरल है जबकि खिचड़ी में पड़े घी में मुँह देखना कठिन है। ऐसा करने के लिए एकाग्र मन से प्रयास करके ही देखा जा सकता है। इसका अभिप्राय यह है कि जो आकृति मन में बनी हुई है क्या आंखें उसे देख सकती हैं? घृत पोषक पदार्थ, रूपवर्धक है। गौ आदि पशुओं से प्राप्त होता है। इससे गाय की रक्षा का अहसास भी जुड़ा हुआ है।

प्राचीन भारतीय एवं यूरोपीय इतिहास साक्षी है– मेधावी संस्कारी जन केवल स्कूलों से नहीं बनते किन्तु माताओं के गर्भ से विशेष संस्कार लेकर जन्मते हैं। देश में अधिक आविष्कार कर्त्ता उत्पन्न

करना माताओं के बुद्धिबल पर निर्भर है और उस बुद्धि बल का प्रभाव माताएं बच्चों पर डाल सकती हैं।

इस सारी प्रक्रिया का नाम 'सीमन्तोन्नयन संस्कार' है जिसका अभिप्राय मस्तिष्क की उन्नति एवं प्रकाश करना है। माता-पिता अपने बच्चों को ऐसे संस्कार अवश्य दें।

डॉ० फोलर (विदेशी डॉ०) कहते हैं कि **गर्भ के पहले 5 मास तक शरीर के शारीरिक साधन उन्नति पाते हैं। सुनीति बुद्धि की उन्नति पाँचवें या छठे महीने में जब कि बच्चे के मस्तिष्क की चोटी बन रही है गर्भवती को मस्तिष्कीय काम करना चाहिए।**

शंका—क्या गर्भवती महिला से शारीरिक सम्बन्ध रखना चाहिए ?

समा०—भारतीय विद्वान् निषेध करते हैं। डॉ० कौवन लिखते हैं कि "गर्भिणी गमन (सम्भोग) से न केवल माता के विचार कामुक होते हैं अपितु गर्भगत बच्चे पर अत्यन्त बुरा प्रभाव पड़ता है, यहाँ तक पाँच वर्ष की आयु में हस्त मैथुन आदि करने वाले बच्चे इसी कारण संसार में पैदा होते हैं।"

गर्भवती स्त्री को मृत्यु, शोक, कष्ट का समाचार न सुनावें न अकेला छोडें।

डॉ० महाशय लिखते हैं कि **"पश्चिमी देश निवासी जो कि धन के पूजक हैं इसलिए सन्तान को उत्तम बनाने के लिए यत्न नहीं करते। दिन रात धन्धे में लगे रहते हैं। यहाँ तक कि वे अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान नहीं रखते।"** क्या अपने देश में ऐसा नहीं है ?

संगीत का प्रभाव

डॉक्टरों का मानना है कि 12 सप्ताह का बच्चा बाहर के संवेदनों को ग्रहण करने लगता है। जैसा संगीत उस समय वह सुनता है। तो वह उसकी रुचि बन जाती है और जब पैदा होता है तो वैसा ही संगीत सुनने पर चुप हो जाता है। इसलिए यह प्रयास होना चहिए कि माँ अच्छा संगीत ही सुनें।[१६]

विश्व स्वास्थ्य संगठन के 'मातृत्व सप्ताह' के अवसर पर हार्ट-केयर फाउण्डेशन आफ इण्डिया ने यह जानकारी दी है, **गर्भधारण के 20वें**

दिन ही भ्रूण के श्रवण सम्बन्धी अंगों का विकास होने लगता है तथा सातवें सप्ताह तक कर्ण में स्थित तीनों हड्डियों का जो श्रवण तन्त्र का मुख्य भाग है, काफी विकास हो चुका होता है। इस कारण गर्भस्थ शिशु वातावरण में उत्पन्न होने वाले ध्वनि सन्देशों का उत्तर देने लगता है। वैज्ञानिक रूप से भी यह सिद्ध हो चुका है कि गर्भवती महिला द्वारा सुने जाने वाला कर्णप्रिय मधुर संगीत न सिर्फ उसे बल्कि शिशु को भी तनाव-रहित करता है।''

माँ के गर्भ में पल रहे बच्चे में सुनने तथा सीखने की क्षमता होती है, इस धारणा के पक्ष में कुछ प्रमाण दो ब्रितानी वैज्ञानिकों ने आधुनिक प्रयोगों के आधार पर जुटाए हैं। इन वैज्ञानिकों के अनुसार माँ के गर्भ में पल रहे पाँच माह के भ्रूण में ही सुनने एवं सीखने की क्षमता उत्पन्न हो जाती है। इन वैज्ञानिकों ने पाँच माह की गर्भवती 15 महिलाओं को चुना। इनमें से 10 महिलाओं के प्रायोजक समूह को संगीत के दो दो कैसेट दिए। प्रथम कैसेट को प्रयोग प्रारम्भ होने के दिन से ही प्रतिदिन कई बार कुछ ऊंची आवाज में सुनना था। पाँच महिलाओं के तुलनात्मक समूह को कैसेट नहीं सुनाया गया था। जन्म के बाद बच्चों की जाँच की गयी, तो पाया गया कि प्रायोजक समूह की दस महिलाओं के बच्चों ने उनके कैसेटों के संगीत के प्रति लगाव प्रदर्शित किया। संगीत सुनकर वे शान्त होते थे। जबकि तुलनात्मक समूह की महिलाओं पर संगीत का कोई प्रभाव नहीं देखा गया।

पुस्तकों का प्रभाव

छठे मास में बच्चे की 'बुद्धि' वृद्धि को प्राप्त होने लगती है और दिनों दिन बढ़ती जाती है। इसलिए सातवें महीने में जिस प्रकार की बुद्धि बनानी हो उसी प्रकार की पुस्तक का अध्ययन करें जैसे वैज्ञानिक बुद्धि चाहिए तो वैज्ञानिक पुस्तकों का अध्ययन करें और यदि दार्शनिक तो दार्शनिक पुस्तकों का अध्ययन करें ?

4

क्या टी०वी० या समाज हमारे बच्चों को बिगाड़ रहा है?

आज अधिकतर लोगों का कहना है कि बच्चों को टी०वी० ने बिगाड़ दिया है। यह बहुत ही विचारणीय प्रश्न है, हमें थोड़ी सहृदयता से विचार करना पड़ेगा। हमें डर है कि वातावरण इतना अश्लील, इतना उत्तेजक हो गया है जिसमें बच्चा प्रभावित हुए विना नहीं रह सकता है। यह ठीक है परन्तु पूर्ण सत्य नहीं है। आपने बम प्रूफ, बुलेट प्रूफ, वाटर प्रूफ नाम तो सुने ही होंगे। जहाँ पतली सी सुई मनुष्य को रुला सकती है वहाँ 'बुलेट प्रूफ जाकेट' पहनने वाले पर गोली भी असर नहीं करती है। जो सैल थोड़ी नमी पाने पर अपना प्रभाव खो देता है वो 'वाटर प्रूफ' होने पर पानी में पड़ा रहने पर भी पानी का प्रभाव अपने ऊपर नहीं आने देता है। 'बम प्रूफ' पर बम का भी असर नहीं होता है। परन्तु उसी व्यक्ति के बच्चे पर टी०वी० का असर हो रहा है। समाज उसे प्रभावित कर रहा है। गोली का असर शरीर पर नहीं हुआ, पानी का प्रभाव सैल पर नहीं हुआ, क्यों? क्योंकि वे प्रूफ बना दिए गए। हमने अपने बच्चों को टी०वी० प्रूफ, सेक्स-प्रूफ, हिंसा-प्रूफ बनाया ही नहीं।

शंका—क्या बच्चों को टी०वी०-प्रूफ, सेक्स-प्रूफ, हिंसा-प्रूफ बनाया जा सकता है?

समा०—अवश्य ! बच्चों को प्रूफ बनाया जा सकता है, कैसे? संस्कारों के माध्यम से, विचारधारा के माध्यम से, रुचियों का विकास करने से बच्चों को प्रूफ बनाया जा सकता है। पिछले अध्याय से पुनः

सम्बन्ध जोड़ते हैं। सातवें, आठवें व नवें मास में पूर्ण विकास को प्राप्त कर बच्चा जन्म लेता है। अब तक संस्कार देने की प्रक्रिया पेट के अन्दर चल रही थी। अब बच्चा बाहर की दुनिया में आ गया जो बाहर की दुनिया में उसे संस्कारित करना है। क्योंकि बाहर के समाज का वातावरण उसके विपरीत होगा। ऐसे समाज से इसका परिचय होगा और उसमें ही उसे रहने के लिए बाध्य होना पड़ेगा, क्या यह समाज उसे प्रभावित नहीं करेगा? अवश्य करेगा। जब तक आप उसे प्रूफ जाकेट (रक्षा कवच) नहीं प्रदान करेंगे।

बच्चे को टी०वी०-सेक्स और हिंसा-प्रूफ कैसे बनाया जाए ?

पैदा होने के कुछ दिन पश्चात् बच्चे को मधु (शहद) और घृत मिलाकर सोने की सलाई से चटाया जाता है और उसकी जिह्वा पर 'ओ३म्' लिखा जाता है। शहद और घी के बराबर मात्रा में मिलाने पर विष बन जाता है। इसलिए 50 ग्राम शहद, 25 ग्राम घी की मात्रा में मिलाना चाहिए इनका अपना महत्त्व है। जैसे—

शहद—शहद जहाँ बलदायक, रूप सुधारक, हलका, कोमल, त्रिदोष नाशक आदि गुणों से भरपूर है, वहाँ इसका एक गुण यह भी है कि यह जितना पुराना होता है उतना ही मधुर होता चला जाता है। निरोग करने की उतनी ही शक्ति बढ़ती जाती है। बच्चे पर इस बात का असर हो रहा है कि वह भी शहद की तरह जितना पुराना हो उतना ही मधुर और निरोग बना रहे। जिस बच्चे के बचपन को संवार दिया जाता है वह बूढ़ा होने पर भी रोगी नहीं होता है।

घी—सौम्य, शीतवीर्य (तर) अग्नि, स्मृति, मेधा, कान्ति, स्वर, लावण्य, सुकुमारता, ओज, तेज, बल, वीर्य सब को बढ़ाने वाला है। इसका एक प्रमुख गुण है—'स्नेह', जहाँ हम मित्र शब्द कहते हैं, वहाँ भाव 'स्नेह' (ञिमिदा-स्नेहने) का होता है। जैसे घी थोड़ी सी गर्मी पाते ही पिघल जाता है वैसे ही एक सच्चा मित्र, मित्र को कष्ट में देखकर पिघल जाता है। बच्चे पर इस प्रकार के संस्कार छोड़े जा रहे हैं कि

वह भी ऐसे ही संस्कार वाला बने।

सोना—स्वर्ण वीर्यवर्धक, मेधा, स्मृति और आयु का कर्त्ता है इसलिए स्वर्ण के घिसने से उसके अणु सूक्ष्म रूप से घी और शहद के अणुओं से मिलकर अनोखा प्रभाव उत्पन्न कर देते हैं। जिससे बच्चे के शरीर पर विष का प्रभाव नहीं होता है।

ओ३म् क्यों लिखते हैं?

'ओ३म्' परमपिता परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ नाम है। इसका अर्थ है 'रक्षक'। प्रायः देखा जाता है कि मनुष्य वाणी से बड़ा अनर्थ करता है। इसलिए जिह्वा पर ओ३म् लिखकर यह सन्देश दिया जाता है कि यह वाणी ओ३म् जैसे श्रेष्ठ शब्दों के उच्चारण करने के लिए मिली है, बच्चा इसका दुरुपयोग करना न सीख पाए। हमेशा इसका सदुपयोग करता रहे।

भगवान् प्रदत्त नाम 'वेद'—

समाज में बच्चों को अनेक नामों से पुकारा जाता है। परन्तु भगवान् शुरू ही से प्रत्येक बच्चे को एक नाम देकर भेजता है। वह नाम 'वेद' है जिसके चार अर्थ होते हैं[२०]—**ज्ञान, विचार, लाभ, सत्ता।** इसलिए हमारे जीवन में वेद महत्त्वपूर्ण हैं जो सब से पहले हमें ज्ञान देते हैं। हमारे जीवन के लिए जो भी आवश्यक है, उस की जानकारी हमें वेदों से प्राप्त होती है।

जानकारी के पश्चात् विचार करने की शक्ति प्राप्त होती है। क्या सही है? क्या गलत है? किसे प्राप्त करना है? किसे छोड़ना है? विचार की शक्ति प्राप्त होने के बाद ही मनुष्य हानि से बच सकता है। विचार शक्ति न होने से कितनी बड़ी-बड़ी हानियाँ, गलतियाँ हम कर बैठते हैं या दूसरों को हानि पहुँचाते हैं, जिसका हमें अहसास भी नहीं हो पाता है। इसलिए विचार करके हमें लाभ ही लाभ प्राप्त करना है हानि नहीं। तभी सही मायने में हम मनुष्य बन सकते हैं। यही सत्ता है, यही अस्तित्व है। भगवान् श्रीराम की, योगेश्वर श्रीकृष्ण की, महर्षि दयानन्द आदि की आज भी सत्ता है और रहेगी। हे पुत्र/पुत्री तुम्हारा

जन्म निरर्थक नहीं हुआ, उसका कुछ उद्देश्य है, तुम्हें ज्ञान प्राप्त करना है, विचार करने की शक्ति पैदा करनी है, तभी तुम जीवन का लाभ प्राप्त कर सकोगे, फिर तुम्हें सत्ता प्राप्त हो जाएगी अर्थात् 'अस्तित्व बन जाएगा। इस भाव को बच्चे के दाहिने कान के पास सुनाएं और ये वाक्य बोलें—(वेदोऽसीति Vedoaseeti)। इस प्रकार और भी विचार बच्चे को सुनावें। पिता प्रार्थना करे और भाव के रूप में कहे—हे इन्द्र-इस बच्चे के लिए श्रेष्ठ धन दो, मन की कुशलता दो। इसका मन शिव संकल्प वाला हो, इसका मन इसके नियन्त्रण में रहे। इसका सौभाग्य हो। यह ऐसे धन का मालिक बने जिससे इसे पुष्टि मिले (कमजोरी नहीं)। वाणी की मधुरता मिले। सारे दिन, सुदिन-अच्छे दिन हों अर्थात् ऐसे दिन जिनमें शुभ कार्य होते रहें।[२१]

हे पुत्र ! तुम पत्थर बनो, फरसा बनो, सोने जैसे तेजस्वी बनो। तुम्हारा नाम वेद है, तुम सौ वर्ष तक जीओ।[२२]

शंका— पत्थर, फरसा भी कोई बनाने की चीज है।

समा०— पत्थर व फरसा नहीं बनाना है लेकिन इससे प्रेरणा देनी है। जैसे सभी परिस्थितियों में प्रभावित न होने की योग्यता। संसार की सारी धातुएं गर्मी पाकर पिघल जाती हैं, परन्तु पत्थर नहीं पिघलता अपितु राख बन जाता है। हे पुत्र/पुत्री जीवन में अनेक प्रकार की गर्मी आती है। जैसे— कभी लोभ की गर्मी, कभी सेक्स की गर्मी, कभी क्रोध की तो कभी हिंसा की, परन्तु तू पिघलना (अस्थिर) नहीं होना, बलिदान हो जाना। विवाह समय लड़की का पैर एक पत्थर (शिला) पर रखाया जाता है। वहाँ भी यही भाव है जो स्त्री परिवार में छोटी-छोटी बातों पर पिघलती नहीं। वह ही ऐसे बच्चों को जन्म दे सकती है।

शंका—परन्तु (फरसा) क्यों बनाना चाहते हो?

समा०—फरसा तीक्ष्णता का प्रतीक है। जिसका सम्बन्ध वाणी से है। फरसा दो भाग कर देता है, अच्छा एक तरफ और खराब एक तरफ। बच्चे की वाणी भी वैसी ही तीक्ष्ण हो जो बुराई और अच्छाई को बता

सके अर्थात् सही-सही निर्णय कर सके। कभी-कभी बच्चे 'समझ' न होने के कारण सही और गलत बातों को सुनकर चुप रह जाते हैं, कुछ बोल नहीं पाते हैं, उत्तर नहीं दे पाते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि हम बच्चों को सही-गलत में निर्णय करने और बोलने का अभ्यास नहीं कराते हैं।

सोने की भाँति मन को आकर्षित करने वाला हो। सोना सब को प्यारा होता है, सभी पाने की इच्छा रखते हैं। आपका बच्चा इतना प्यारा हो कि सब के मन को मोह सके ऐसे मन, बुद्धि और शरीर वाला आपका बच्चा बने और सौ वर्षों तक जिये।

इस प्रकार के व्यवहार से, शिक्षा से, बच्चे इतने प्रभावशाली बन जायेंगे कि बाहर की किसी वस्तु का प्रभाव उन पर नहीं पड़ेगा और यदि हुआ भी तो बहुत थोड़े समय के लिए होगा। थोड़े समय के पश्चात् फिर पहले जैसा हो जाएगा। कोई बुरा प्रभाव उन पर नहीं आएगा। जैसे– अंगारा, अंगारे पर थोड़ी राख आ जाती है। परन्तु हिलाने पर पुनः चमकने लगता है यही बात बच्चों पर भी लागू होती है। आप उन्हें सारी बातें याद दिलाते रहिए, हिलाते रहिए, आप देखेंगे कि हाथ काले करने वाली राख उन पर नहीं जम पाएगी। टी०वी० व समाज का बुरा प्रभाव बच्चे पर इसलिए पड़ता है, क्योंकि–

(1) हम बच्चों के साथ बैठ कर टी०वी० नहीं देखते।

(2) उनके प्रश्नों, शंकाओं, जिज्ञासाओं को एक सही आकार नहीं दे पाते।

(3) समाज में सभी दृश्यों, आकृतियों के उतार-चढ़ाव को किस दृष्टिकोण से देखें व उनका सामना करें, बच्चों को हम नहीं सिखाते।

कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति क्या गन्दी वस्तुओं को घर ले आता है? नहीं, चुन-चुन कर अच्छी चीजें ही लेकर आता है। फिर हमारे बच्चे गन्दी मानसिकता, हिंसा क्यों लेकर आते हैं ? हमें उनको उत्तम

चीजों को ही चुनने की तकनीक सिखानी पड़ेगी। कवि के शब्दों में—

''उत्तम विद्या लीजिए यद्यपि नीच घर होए।
पड़ा अपावन ठौर भी कंचन तजे न कोए।।

सी०एम०एस० के द्वारा 'बच्चों पर टी०वी० का प्रभाव' विषय पर कराये गए सर्वे रिपोर्ट के अनुसार—अच्छा या बुरा बच्चे वहीं सीखते हैं जो कुछ टी०वी० पर देखते हैं, हो सकता है उसमें से कुछ उनके लिए लाभदायक हो और कुछ लाभदायक नहीं हो। उन पर पड़ने वाला यह प्रभाव नकारात्मक है या सकारात्मक यह इस माध्यम को इस्तेमाल के नजरिये पर निर्भर करता है।

बच्चों को विवेकशील दर्शक बनाना बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि जो कुछ वे देखते हैं अभिभावकों को अनिवार्यतः उस पर नजर रखनी चाहिए।

इसलिए बच्चा टी०वी० व समाज से उत्तम-उत्तम चीजें ही ग्रहण करने वाला बनेगा।

5

बच्चे का दृष्टिकोण

(अपने प्रति, परिवार, समाज व राष्ट्र के प्रति)

आपने जो परिश्रम पीछे किया अब उसका फल आपको मिलेगा। बुद्धिमान् लोग जब लोहा गर्म होता है तभी चोट मारते हैं तो उसका प्रभाव पड़ता है। अब आपका बच्चा आपकी बातों को ग्रहण करने के योग्य बन गया है। अब थोड़ी पौष्टिक मात्रा दी जा सकती है। अर्थात् उसका दृष्टिकोण बनाया जा सकता है। हमारी संस्कृति का एक मूल मन्त्र है, जो त्याग पूर्वक उपभोग करने का उपदेश देता है।[२३]

शंका—त्याग पूर्वक उपभोग क्यों करें ?

समा०—क्योंकि कोई शक्ति तुम्हें देख रही है। जो संसार के कण-कण में बसी हुई है। और यदि तुमने ऐसा नहीं किया तो तुम्हें परिणाम भुगतना पड़ेगा।

शंका—त्याग पूर्वक उपभोग से क्या मिलेगा?

समा०—तुम्हारी दृष्टि पवित्र हो जाएगी।

शंका—क्या हमारी दृष्टि अपवित्र है ?

समा०—हाँ ! ऐसा देखा जाता है कि हमारी दृष्टि अपवित्र (मैली) है।

रामायण काल में देखें—शास्त्रों का ज्ञाता होने पर भी रावण की दृष्टि पवित्र नहीं थी।

महाभारत काल को लें—पुत्र मोह के कारण महाराज धृतराष्ट्र की दृष्टि मैली हो गयी, जिसका परिणाम उसके पुत्रों को भुगतना पड़ा। दृष्टि मैली होने के कारण दुर्योधन ने अपने कुल की मर्यादा

को सब के बीच में नंगा कर दिया था।

वर्तमान काल में देखें– एक माँ अपने दो बच्चों में भेद करती है क्योंकि एक लड़की है। समाज की दृष्टि लड़की के प्रति सौहार्द पूर्ण नहीं है इसलिए लड़की के जन्म के समय वैसी खुशी नहीं होती जैसी लड़के के जन्म के समय होती है, अपवादों को छोड़कर। दैनिक व्यवहार में भी देखा जाता है कि बस की जिस सीट पर हम बैठे हैं यदि हमारा अपना कोई आ जाता है तो जगह न होते हुए भी हम उसे जगह देते हैं, जबकि कोई बुजुर्ग भी खड़ा है तो खड़ा ही रहने दिया जाता है। एक ओर सारी पृथिवी को हम अपना परिवार मानते हैं तथा दूसरी ओर जब अवसर आते हैं तो हमें अपना घर, अपने रिश्तेदार ही सारा संसार नजर आने लगते हैं। यह सब क्या है?

शंका–यह त्याग पूर्वक भोग क्या है ? जिससे दृष्टि पवित्र होती है।

समा०–त्याग पूर्वक भोग से अभिप्राय 'यथार्थ उपभोग' सदुपयोग से है, जैसे चाकू का यथार्थ उपभोग फल व सब्जी काटना है, किसी का पेट काटना नहीं है। यदि आपके शरीर को तीन रोटियों की आवश्यकता है और चार या पाँच खा लेते हैं तो यह अन्न का दुरुपयोग हो गया, जिससे आप बीमार भी हो सकते हैं। इसी प्रकार समय का दुरुपयोग है। हम सिनेमा हाल परिवार के साथ जा सकते हैं परन्तु किसी मन्दिर में या किसी महात्मा के प्रवचन में परिवार के साथ नहीं जाते हैं। यदि अपने छोटे से बच्चे को स्वयं मन्दिर या जहाँ नैतिक मूल्यों की चर्चा होती है ले जाते हैं तो यह समय का सदुपयोग होगा और बच्चे के चित्त पर इसके संस्कार पड़ेंगे।

इसी प्रकार धन का दुरुपयोग है। एक माँ से पूछा यह धन किसका है? माँ ने कहा मेरा है मेरे पति ने कमाया है, मेरे बेटे ने कमाया है। कुछ दिन पश्चात् माँ का स्वर्गवास हो गया और सब कुछ यहीं रह गया। आप सौभाग्यशाली हैं कि आपने बुद्धि-चातुर्य से बहुत अधिक अर्जित कर लिया। परन्तु परेशानी तब आती है जब आप इसे

अपना मानकर अनाप-शनाप कार्य शुरू कर देते हैं। देखा गया है कि जब इस प्रकार की कृपा भगवान् करते हैं तब मनुष्य सम्भल नहीं पाता है। कहीं अहंकार का शिकार हो जाता है तो कहीं कंजूसी का या फिर व्यसनों का। इसलिए सदुपयोग करने के लिए कहा गया है। मानो प्रभु परीक्षा लेते हैं कि क्या वह अगली कक्षा में जाने के योग्य बना है या नहीं ? कवि के शब्दों में—

"धरा धाम धन जायेंगे, कुछ भी न संग में।
तू धर्म धन संग में लिये जा लिये जा।।"

त्याग पूर्वक भोग से ही आपकी दृष्टि पवित्र हो सकती है।

शंका—मनुष्य से यह सब कौन करवाता है?

दुर्योधन कहता है—"**मैं धर्म को जानता हूँ किन्तु धर्म में मेरी प्रवृत्ति नहीं होती है। मैं अधर्म को भी जानता हूँ मेरा उससे छुटकारा नहीं होता है। मैं वैसा करता हूँ जैसा मेरा दैव (भाग्य) मुझ से करवाता है।**"

समा०—व्यक्ति जानते हुए भी इसलिए नहीं छोड़ पाता है क्योंकि वह हठ करता है, कहीं दुराग्रह होता है, कहीं अज्ञान होता है। महर्षि दयानन्द लिखते हैं—"**मनुष्य का आत्मा सत्य और असत्य का जानने वाला है परन्तु हठ, दुराग्रह, अविद्या के कारण सत्य को छोड़ असत्य की ओर झुक जाता है।**" दुर्योधन जानता है कि पाण्डवों के साथ उसे ऐसा बर्ताव नहीं करना चाहिए परन्तु हठ और दुराग्रह के कारण उसने ऐसा किया। दुर्योधन ने अपने पिता के अन्तःकरण में छिपे दुराग्रह को वंशानुक्रम से प्राप्त किया था। इसमें दैव क्या करेगा? ऐसे व्यक्ति को स्वयं भगवान् भी आकर समझाये तब भी वह नहीं मानेगा। इसलिए व्यक्ति को हठी, दुराग्रही, अज्ञानी नहीं होना चाहिए। बच्चों को शुरू से ऐसे संस्कार देने चाहिए जिससे वे हठी दुराग्रही न बन जाएं। घर व पड़ोस के लोग सभी यह ध्यान रखें।

दृष्टि तीन प्रकार से पवित्र होती है— मन वचन और कर्म से। कैसे ? इसकी समीक्षा करते हैं। महर्षि वाल्मीकि के विषय में जाना

कैसे ? इसकी समीक्षा करते हैं। महर्षि वाल्मीकि के विषय में जाना जाता है कि वे एक डाकू थे परन्तु ऐसा नहीं था। राजा राम को अपना परिचय देते हुए वे कहते हैं।[२४]

''मैं प्रचेतस ऋषि का दसवाँ पुत्र हूँ मैंने मन, वचन तथा कर्म से कोई पाप नहीं किया है।'' इससे पता चलता है कि मनुष्य की दृष्टि तीन प्रकार से पवित्र होती है।

(1) **मन**–मन ही मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण है।[२५] **''मन के हारे हार है मन के जीते जीत''।** यदि मन के ही कारण हम बन्धनों में बंधते हैं, मन के कारण ही हमारा मोक्ष होता है, तो क्यों नहीं हम अपने मन को शिव संकल्प वाला बना लें। क्यों न हम अपने मन को त्याग पूर्वक भोग सिखा दें।

(2) **वचन**– सभी आभूषणों का आभूषण यदि है तो ''वाणी है।''

सारे आभूषण क्षीण हो जाते हैं, टूट जाते हैं, मैले हो जाते हैं, परन्तु वाणी एक ऐसा आभूषण है जो न क्षीण होता है, न टूटता फूटता है।[२६] वाणी विना सजाए संवारे फलवती नहीं होती है। लता मंगेशकर को ही लें उनकी वाणी प्रभु का वरदान है ऐसा लोग मानते हैं। परन्तु जब उनसे पूछा गया तो उन्होंने बताया कि वह आठ या दस घण्टे प्रतिदिन अभ्यास करती हैं। हमारी वाणी प्रभु का वरदान नहीं है तो फिर हम कितना समय अपनी वाणी को संयमित करने में देते हैं? या कभी सुर में ढालने का प्रयास करते हैं। मधुर बनाने का प्रयास करें। जहाँ गलती हो उसे धीरे-धीरे व्यवहारिक रूप से दूर कर दें। बच्चों के सामने स्वयं कठोर न बोलें। इतना दबाव न बनाकर रखें कि बच्चों को झूठ बोलना पड़े या बहाना बनाना पड़े।

(3) **कर्म**–जैसा बोलें वैसा ही करें। कथनी (वाणी) करनी (कर्म) में सामञ्जस्य हो। बच्चों के सामने चीजों को बाँटकर खायें। बच्चों के द्वारा खाने की वस्तुओं को बड़ों व छोटों को देने की आदत डालें। अपना काम स्वयं करने दें।

शंका–दृष्टि पवित्र होने से क्या होगा ?

समा०–दृष्टि पवित्र होने से यह पता चलेगा कि यह ध-

किसका है ? यह सब जो मेरे पास है किसका है ? यह तो पता चल ही गया कि मेरा नहीं है किसी और शक्ति का है। इस प्रकार की सोच से पवित्र हुई दृष्टि का अपना एक झुकाव होता है। उसे ही कोण कहते हैं यही दृष्टिकोण की परिभाषा है। जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि (कोण)।

पीछे के चिन्तन से यह स्पष्ट हो गया है कि रावण की दृष्टि ही ऐसी थी जिसका कोण (झुकाव) भी वैसा ही बना। इसी प्रकार दुर्योधन की दृष्टि (शकुनि मामा व पिता धृतराष्ट्र के कारण) का झुकाव बना और ऐसे ही हमारी भी दृष्टि का कोण है। इसलिए मनुष्य का दृष्टिकोण न अपने प्रति, न परिवार के प्रति, समाज व राष्ट्र के प्रति क्या होगा?

इस प्रकार बच्चे को ज्ञान कराते रहने से बच्चे का दृष्टिकोण बनता चला जाएगा। प्रतिदिन कुछ ऐसी चर्चा अवश्य करते रहें। कभी परिवार के विषय में कभी समाज के विषय में और कभी राष्ट्र के विषय में, यह बच्चे को सर्वांगीण विकास वाला, बहुमुखी प्रतिभा वाला बनाने की पद्धति है, मार्ग है।

6

निर्माण किये गए मनुष्य का स्वरूप एवं कसौटी

सही दृष्टिकोण के पश्चात् बच्चा परिपक्व (पुष्ट) होता चला जाता है। इसके अतिरिक्त आप अनेक प्रकार के विचार, संस्कार, सन्ध्या, हवन, पूजा, स्तुति, प्रार्थना, उपासना आदि जो भी आवश्यक हैं, वे सब बच्चे को देते रहें। इस प्रकार बच्चा एक स्वरूप में ढल जाता है। अब उस स्वरूप का वर्णन करते हैं।

एक व्यक्ति एक बगीचे से गुजर रहा था। व्यक्ति अपनी मानसिक परेशानी से परेशान था। चलते-चलते बगीचे से एक फूल नोच लिया और मसल कर नीचे फेंक दिया। बिखरे हुए फूल से अवाज आई– (जड़ पदार्थ बोलते नहीं लेकिन भाव सुने जाते हैं) व्यक्ति रुक जाता है। मानो ! फूल कह रहा है कि हे मुसाफिर ! मैं इस छोटी सी वाटिका में इसकी शोभा को बढ़ा रहा था, प्रसन्नता बिखेर रहा था, सुगन्ध फैला रहा था। तूने मेरा बलिदान कर दिया, परन्तु जिस वाटिका में तू रह रहा है क्या कभी उसकी शोभा को बढ़ाया है ? क्या कभी तुम्हारे कार्यों से लोग प्रसन्न हुए हैं ? व्यक्ति सोचता है और कहता है। मैंने तो लोगों की खुशियों को छीना है। सुखी, प्रसन्न मनुष्यों को देखकर ईर्ष्या की है। जीवन को दुर्गन्ध से भर लिया है। प्राणियों की बलि दी है, मैं अपना बलिदान कैसे कर सकता हूँ।

अपने अन्दर पश्चात्ताप के भाव लिये हुए जैसे ही वह आगे बढ़ता है, सत्संग स्थल से आचार्य की मधुर आवाज आ रही थी–

'मनुष्य के जीवन से भी सुगन्ध आ सकती है'[२७] व्यक्ति सत्संग में जाता है और बैठ जाता है। आचार्य कह रहे थे कि जैसे— हीरा देखने में बहुत कुरूप होता है, लेकिन जब वह षाण पर चढ़ता है तो बहुत आकर्षक बन जाता है, उसके अन्दर छिपी हुई चमक बाहर आ जाती है। उसी प्रकार मनुष्य भी है जब वह अपने स्वरूप को कसौटी पर नहीं कसता, पैमाने पर नहीं नापता, उसके अन्दर छिपी हुई सुगन्ध उसे सुवासित नहीं कर पाती है। फल वही सुगन्धित होता है जो पुष्ट होता है और परिपक्व होता है। इसलिए हमें बच्चे के स्वरूप को स्वच्छ बनाना चाहिए। कुछ कसौटियां इस प्रकार हैं—

(1) **ऐश्वर्यशाली**—मनुष्य को ऐश्वर्यशाली होना चाहिए परन्तु ऐश्वर्य से अभिप्राय केवल धन-सम्पत्ति से नहीं अपितु कुछ और है। ऐश्वर्यशाली मनुष्य की पहचान सज्जनता है।[२८] सज्जनता से अभिप्राय सु-जनता, भल-मानसता से है। ऐसा मनुष्य जिसने सत्य को धारण करने, उसे फैलाने का व्रत लिया हो सज्जन कहलाता है। इसलिए जिसकी कमाई में ईश्वर का भाव रहेगा, वही ऐश्वर्य कहलाएगा। जैसे— जहाँ मधुरता है वहीं माधुर्य है, जहाँ सुन्दरता है वहीं सौन्दर्य है, जहाँ ईश्वर है वहीं ऐश्वर्य है। जहाँ मधुरता नहीं वहाँ माधुर्य नहीं, जहाँ सुन्दरता नहीं वहाँ सौन्दर्य नहीं, जहाँ ईश्वर नहीं वहाँ ऐश्वर्य नहीं। जिसका स्वभाव ही इस प्रकार का ऐश्वर्य प्राप्त करना है वही ऐश्वर्यशाली है।

ईश्वर का भाव है तो ऐश्वर्य जानो।
और नहीं तो धन-सम्पत्ति मानो।।

ऐसे मनुष्य का स्वरूप देखिये—

सज्जन मनुष्य का स्वभाव अञ्जलि में रखे पुष्पों के समान होता है। वे दोनों हाथों को बराबर सुगन्धित करते हैं। एक को कम या दूसरे को अधिक नहीं। सज्जन मनुष्य भी अपने बायें व दायें लोगों में पक्षपात नहीं करते हैं। उन का व्यवहार भेद-भाव रहित होता है। वे तो पंख के समान दूसरों के ताप निवारण के लिए अपने को घुमाते रहते हैं। अपने को कष्ट में रखते हैं परन्तु दूसरों को कष्ट

में नहीं देख सकते हैं, सदैव उपकार में लगे रहते हैं। जब भी बोलते हैं प्रिय ही बोलते है और उनका प्यार अकृत्रिम (बनावटी) नहीं होता है। ऐसा वे किसी दबाव से, लोभ से नहीं करते हैं अपितु यह तो सज्जनों का स्वभाव होता है। चन्द्रमा किसने शीतल किया है शीतलता प्रदान करना तो उसका स्वभाव है। इसलिए निर्माण किए गए बच्चे का स्वरूप ऐश्वर्यशाली बच्चे का स्वरूप होगा।

(2) **शूरवीर**–वह मनुष्य शूरवीर होगा और उसकी पहचान संयमित वाणी है।[२६] यहाँ शरीर से बलवान् होना अभिप्रेत नहीं है अपितु वाणी जिसकी संयमित है, तपोमयी है, वही शूरवीर है। जिस मनुष्य की वाणी में सत्य बैठ जाता है उसकी वाणी अमोघ हो जाती है, अर्थात् उसका वार खाली नहीं जाता है। ऐसा मनुष्य यदि किसी को कहे कि तुम धार्मिक बनो तो वह मनुष्य धार्मिक बन जाता है। सुखी बनो तो सुखी बन जाता है। ऐसा उदाहरण हमारे सामने है– महात्मा बुद्ध तथा अंगुलिमाल, महर्षि दयानन्द तथा स्वामी श्रद्धानन्द, अमीचन्द आदि।

ऐसा मनुष्य अप्रिय वचनों से दरिद्र होता है इसलिए शायद कहा गया है– सत्य बोलो, प्रिय बोलो, सत्य भी यदि अप्रिय हो तो मत बोलो। जो केवल प्रिय वचनों का धनी होता है जैसे कोयल जो अपनी मधुर आवाज के द्वारा सब को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है और कौआ जो हमेशा अप्रिय ही बोलता है क्या कोई उसकी आवाज सुनना चाहता है, शायद कोई नहीं। उधर कोयल को व्यक्ति एक क्षण के लिए रुककर सुनना चाहता है। ठीक ही कहा है–

कागा किसका धन हरे, कोयल किसको देय।
एक जीभ के कारने, जग अपना कर लेय।।

ऐसा मनुष्य दूसरों के विषय में व्यर्थ ही चुगली नहीं करता है। कुछ मनुष्यों की ऐसी आदतें पायी जाती हैं कि जो व्यर्थ में दूसरों की चर्चा में अपना समय बर्बाद करते रहते हैं। कुछ महिलाओं में इस प्रकार की रुचि पायी गयी है– जो अपना बहुमूल्य समय जिसमें कि बच्चों की शिक्षा पर ध्यान दिया जा सकता है, कोई पुस्तक पढ़ी जा

सकती है, व्यर्थ ही व्यतीत कर देती हैं। जिसका बच्चों पर असर पड़ता है। प्रश्न किया गया है कि ऐसे मनुष्य जो अप्रिय वचनों से दरिद्र हैं, प्रिय वचनों से भरे हुए हैं, दूसरों की निन्दा, चुगली नहीं करते हैं कितने हैं ? और वह वसुधा (पृथिवी) कहाँ-कहाँ उनके द्वारा सुशोभित हुई है ? और देखिए—

जिसका मुख प्रसन्नता का घर है, वाणी अमृत की वर्षा करने वाली है और जिनका कार्य केवल परोपकार करना है, वे किसके पूज्य नहीं हैं ? इसलिए हमारी दूसरी कसौटी शूरवीर होना है। ऐश्वर्यशाली मनुष्य ही शूरवीर हो सकता है।

(3) **ज्ञानी**— तीसरी कसौटी ज्ञानी बनने की है। इसकी पहचान उपशम है।[३०] ज्ञानी मनुष्य वह है जिसके जीवन में शान्ति है। उपशम कहते हैं तृष्णा का नाश, इन्द्रियों का शमन, निवृत्ति, छुटकारा। यदि पढ़ा हुआ मनुष्य अशान्त है, तनाव में है, कष्टों में है तो उसे पढ़ा हुआ नहीं कहा जा सकता। बहुत सारे वेद शास्त्रों का अध्ययन कर लेने पर अहंकारी हो जाए, अशान्त हो जाए, व्यवहार ठीक न रहे, ज्ञान व्यवहार में न हो तो ऐसा ज्ञानी बनना व्यर्थ है। इसलिए कहा गया है कि विद्या चार प्रकार से परिपक्व होती है—

(1) गुरुमुख से पढ़ना (आगम)
(2) स्वाध्याय करना, मनन करना
(3) प्रवचन—दूसरों का पढ़ाना व समझाना
(4) व्यवहारकाल— उसे व्यवहार में उतारना

इस प्रकार बच्चा ज्ञानी (जो अध्ययन वह कर रहा है) परिपक्व बन जाता है।

(4) **श्रोत्रिय**— श्रुति वेद को कहते हैं। श्रुत का अर्थ है सुना हुआ। वेद आदि को अच्छी प्रकार जानने वाला श्रोत्रिय होता है और इसकी पहचान विनयशील विनम्र होना बतायी गयी है।[३१] कहा भी गया है कि **'विद्या ददाति विनयं'**— विद्या से विनम्रता प्राप्त होती है परन्तु ऐसा बहुत कम देखा गया है कि जो विद्वान् हो और विनम्र भी

हो। एक शिक्षित बच्चा विनम्र हो यह ठीक है विद्या विनय देती है परन्तु विनम्र होने के लिए विद्या ही पर्याप्त नहीं है। उसके साथ-साथ बच्चे में सज्जनता हो, उसकी वाणी संयमित बनायी हो, दुरुस्त चिन्तन हो, मन में तनाव न हो ऐसे बच्चों में ही विनम्रता के संस्कार आते हैं।

(5) **पात्रव्ययी**—पाँचवीं कसौटी है पात्र को जानकार व्यय करने वाला।[३२] आपके पास ऐसी दृष्टि होनी चाहिए जो सत्पात्र और कुपात्र को जान सके। ऐसा न हो कि पवित्र कमाई चाहे वह विद्या हो या धन-सम्पत्ति कुपात्र के पास चली जाए और वह उसका दुरुपयोग करे। जिससे समाज में बुराइयां फैल जाएं। इतिहास इस बात का गवाह है कि महाराणा प्रताप ने इतनी लड़ाइयां लड़ीं, कष्ट सहन किए, तब उनका नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्णिम अक्षरों में लिखा गया परन्तु भामाशाह को देखिए लोग उन्हें भी उसी प्रकार आदर की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि उन्होंने सत्पात्र की पहचान कर अपनी सारी सम्पत्ति महाराणा प्रताप को सौंप दी। जब नोबेल आल्फ्रेड नें डायनामाइट का आविष्कार किया तो बहुत दुःखी हुए क्योंकि उन्हें पता था कि कुपात्र इसका दुरुपयोग करेंगे और ऐसा ही हुआ। इसलिए उचित ही कहा गया है कि विद्या से व्यक्ति विनम्र बनता है और विनम्रता से पात्र बनता है। प्रभु की भक्ति का आशीर्वाद भी हमें पात्र बनने पर ही प्राप्त होता है। इसलिए हम अपने बच्चों को सत्पात्र बनाने का प्रयास करें।

(6) **तपस्वी**—तपस्वी की पहचान है 'अक्रोधः' अर्थात् जो क्रोध नहीं करते हैं।[३३] जिसने क्रोध पर विजय प्राप्त कर ली है बस वही तपस्वी है। गीता में कहा गया है—क्रोध से किस कार्य का क्या परिणाम होगा यह विवेक नहीं रहता। किस समय किसके साथ क्या वचन किया था यह स्मृति नष्ट हो जाती है। स्मृति नाश के साथ सम्पूर्ण सदुपदेश नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य बुद्धिहीन हो जाता है। फिर मनुष्य तो मनन की, बुद्धि की उपज है। बुद्धि नष्ट हुई तो मनुष्य नष्ट हो गया। यह क्रोध केवल सामान्य मनुष्यों को ही नहीं

दबाता अपितु बड़े-बड़े विद्वान्, तपस्या करने वालों पर भी अपना प्रभाव डाल देता है। इसलिए यदि आप चाहते हैं कि बच्चे क्रोधी न बनें तो माता-पिता को बहुत पहले से प्रयास करना पड़ेगा। इसलिए यह शर्त रखी गयी है कि बच्चे की शिक्षा उसके जन्म से न्यूनतम 16 वर्ष पूर्व प्रारम्भ हो जाती है।

(7) **बलवान्**—बलवानों का आभूषण 'क्षमा' है।[३४] बलवान् वह नहीं होता है जो शरीर से भारी भरकम हो, ताकतवर हो। जो शक्तिशाली व समर्थ होते हुए भी कमजोरों की गलतियां क्षमा कर सके, वही बलवान् होता है। कवि के शब्दों में—

क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके पास गरल हो।
उसको क्या जो दन्तहीन, विषरहित, विनीत, सरल हो।।

मनुष्य का आभूषण रूप है, रूपवान् होना चाहिए, सुन्दर होना चाहिए परन्तु गुणवान् भी होना चाहिए। यदि गुण नहीं हो तो रूप बेकार है। सच बोलना भी एक गुण है, परन्तु ऐसा सच जिस से हानि न हो, क्योंकि गुणों से हानि भी हो सकती है। मान लीजिए आपके अन्दर सच और स्पष्ट बोलने का गुण है, आपके पति 10 लोगों में बैठे हों वहीं आप उन्हें उनकी गलतियां और कमियां याद दिलाने लगें तो दोनों में मन-मुटाव हो जाएगा। बात सत्य भी है और आप स्पष्ट भी बोल रही हैं, परन्तु समय का आपको 'ज्ञान' नहीं है इसलिए गुण ज्ञान से सुन्दर लगते हैं और 'ज्ञान' क्षमा से सुशोभित होता है। ज्ञानी मनुष्य के पास 'क्षमा' न हो तो ज्ञान निरर्थक है। जब पति-पत्नी का झगड़ा होता है तो कहते हैं कि अब तो सहन नहीं किया जा सकता है, हद हो गई है। परन्तु **सहनशीलता की तो कोई हद ही नहीं होती और यदि कहीं होती भी है तो वह क्षमा में होती है।**

साधु प्रकृति के लोग यदि किसी मित्र या शत्रु को क्षमा कर देते हैं तो यह उनका आभूषण है और यदि राजा अपराधियों को क्षमा करता है तो यह उसका दूषण है, दोष है। इसलिए यह मनुष्य की महत्त्वपूर्ण कसौटी है। जो उसे बचपन से सिखाई जानी चाहिए।

इसके विपरीत बदले की भावना से घर-परिवार, राज्य-देश नष्ट होते देखे गए हैं, परन्तु बदले की भावना समाप्त नहीं होती।

धार्मिक—व्यक्ति का धार्मिक होना बहुत जरूरी है। इसलिए मनुष्य बनने की यह अन्तिम कसौटी है। और इसकी पहचान है निर्व्याज होना।[३५] व्याज कहते हैं छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष को और ईर्ष्या-द्वेष, छल-कपट से रहित होना निर्व्याज है तथा निर्व्याज ही धार्मिक है। धर्म की बहुत बड़ी-बड़ी परिभाषाएं दी गयी हैं, परन्तु यह सब से सरल और सार्थक प्रतीत हुई है। ऐसा मनुष्य चाहे मन्दिर में हो या मस्जिद में या और कहीं, यदि उसके अन्दर छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष नहीं है तो वह धार्मिक है और उसका न केवल यह लोक सुधर जाएगा अपितु परलोक में भी मोक्ष प्राप्त हो जाएगा। इसलिए हम बच्चे को कम से कम चार-पाँच वर्षों तक छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष से अलग रखें तभी उसका धार्मिक बनना सम्भव है। मनुष्य क्रमशः ऐश्वर्यशाली, शूरवीर, ज्ञानी, श्रोत्रिय (विनम्र) पात्रव्ययी, तपस्वी, अक्रोधी, बलवान्, क्षमाशील और धार्मिक बनता है ये सारी कसौटी एकत्र होने पर शील बनता है = स्वभाव बनता है, चरित्र बनता है और शील ही सब से आकर्षक आभूषण है।

मनुष्य की सुगन्ध क्या है? अच्छे कामों का फैलाव ही मनुष्य की सुगन्ध हो सकती है। यही मार्ग कष्टों, दुःखों व बन्धनों से छूटने का है। इन सब से अत्यन्त छुटकारा होने पर मनुष्य अमृत (अमरपद) प्राप्त कर लेता है। मनुष्य के अन्दर छिपी हुई चमक बाहर आ जाती है और हीरे के समान चमक-दमक वाला बन जाता है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत पुस्तक में इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि मनुष्य का सर्वांगीण विकास हो। जब हमें कभी कैमरे के सामने आना पड़ता है तो हम सभी प्रकार से सुन्दर दिखना चाहते हैं। कपड़े साफ सुथरे कोई दाग न लगा हो, शेविंग व कटिंग आधुनिक फैशन के अनुसार हो, चेहरे पर यदि कोई दाग हो तो उसे मेकअप से दबाने की कोशिश करते हैं अर्थात् कहीं किसी प्रकार की कोई कमी न रहने पाए। यदि फोटो अच्छा आता है तो हम उसे सामने रखते हैं और खराब बन जाए तो छिपाकर रख देते हैं।

हमारे जीवन में भी एक ऐसा मूवी कैमरा काम कर रहा है जिसमें परिणाम देने की सुविधा है। वह हमारी जानकारी में नहीं है। शायद इसलिए हम उस प्रकार सजने-सँवरने की कोशिश ही नहीं करते हैं। हम भूल जाते हैं कि हम जो भी काम कर रहे हैं उसकी साथ-साथ पिक्चर बनती जा रही है जब उसका परिणाम 'हमारा बच्चा' हमारे सामने आता है तो हम घबरा जाते हैं और सोचते हैं कि यह क्या हो गया ? **परन्तु अब कुछ नहीं हो सकता है। न उसे छिपा सकते हैं न ही रख सकते हैं। जीवन भर उसे झेलते रहते हैं।**

इस कार्य से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि हमारा परिणाम ठीक आए उसके लिए हमें बहुत पहले से तैयार रहना पड़ेगा। योजना बनाकर काम करना पड़ेगा। जो भी कमी रह जायेगी आपके बच्चे को भुगतनी पड़ेगी। इसी प्रकार आपका गुण उसे व्यक्तित्व विकास में सहायक होगा।

आपके प्रश्न

प्रश्न—आप ने कहा कि बच्चे की शिक्षा पैदा होने से 16 साल पहले ही आरम्भ हो जाती है, मैं जानने का इच्छुक हूँ कि क्या 16 साल में ही एक महिला की सोच पूर्णरूप से विकसित हो जाती है। क्या यह 5 या 10 साल में पूर्ण नहीं हो सकती?

—भारत भूषण, हापुड़

उत्तर— माता-पिता की सोच विकसित होने से क्या अभिप्राय है ? पहले हमें यह ठीक से समझना होगा और जानने के लिए कुछ प्रश्नों से गुजरना होगा।

इसके लिए हम कुछ प्रश्न रखते हैं—

(1) क्या आप हठी और दुराग्रही हैं ?

(2) क्या आपको छोटी-छोटी बातों पर जल्दी-जल्दी गुस्सा आ जाता है ?

(3) क्या आपको समस्याओं का समाधान करना आता है ?

(4) क्या आप चुगली करते हैं ?

(5) क्या आप सहनशील हैं ?

(6) क्या आप अचानक, विना समझे, प्रतिक्रिया करते हैं ?

(7) क्या आप प्रतिदिन स्वाध्याय करते हैं ?

(8) क्या आप बार-बार गलती करते हैं ?

(9) क्या आप बड़ों के विषय में बोलते हुए सावधानी रखते हैं ?

(10) क्या प्रातःकाल सैर को जाते हैं, हल्का व्यायाम करते हैं, 5 मिनट का ध्यान करते हैं ?

(11) क्या आपको आयुर्वेद की कुछ जानकारी है ?

(12) क्या आपके अन्दर कुछ प्रशंसनीय गुण हैं ?

यदि ये प्रश्न आपके व्यक्तित्व पर प्रश्नचिह्न (?) नहीं लगाते, तो आपकी सोच पूर्ण विकसित है। आप स्वयं ही निर्णय करें कि कितने वर्षों (5 या 10) में आप इनसे मुक्त हो जायेंगी ? जिस से आपके बच्चे में ये अवगुण न आने पायें। यही बात पुरुषों पर भी लागू होती है। हमारे विचार में 5 वर्ष की आयु तक जो बुरी आदत बन जाती है, वह कठिनता से ही जा पाती है। इसलिए न्यूनतम 16 वर्ष कहा गया है।

प्रश्न (क)—हम रामचन्द्र जी की बात करते हैं जिनमें कोई ईर्ष्या-भाव अशान्ति वाला तनिक भी अवगुण नहीं था, जो हमें पढ़ने को मिलता है, परन्तु लक्ष्मण जो उन्हीं के भाई थे, उन में तमोगुण की प्रधानता अधिक क्यों थी ? रामचन्द्र जी का जन्म शायद माँ की 16 साल की शिक्षा का ही परिणाम था तो अचानक कुछ समय के पश्चात् दूसरे पुत्र की मानसिकता में तमोगुण की प्रधानता समझ में नहीं आती है।

—भारत भूषण, हापुड़

(ख) एक ही माता और पिता की दो सन्तानें (दोनों पुत्र) हैं का वातावरण व संस्कार एक समान होने पर भी दोनों बच्चों के रहन-सहन व संस्कार बिल्कुल भिन्न हैं, अर्थात् जमीन आसमान का अन्तर है, ऐसा क्यों ?

—श्रीमती पूनम ओबराय, हापुड़

उत्तर—जहाँ तक रामचन्द्र जी व लक्ष्मण जी की बात है वहाँ दोनों की माताएँ अलग-अलग हैं। लक्ष्मण जी में शीघ्र उत्तेजित होने का स्वभाव था। एक उदाहरण से समझने का प्रयास करेंगे। एक परिवार में दो बेटे थे। पति-पत्नी ने विचार किया कि हम अपने

बच्चों की परीक्षा लेते हैं। पति ने पत्नी को समझाया कि जब बच्चे स्कूल से आयें तो उन्हें कहना कि तुम्हारे पिता जी ने खाना नहीं बनाने दिया और मुझे बुरा-भला कहा। बड़ा बेटा स्कूल से आया, तो पूछा माँ भूख लगी है, भोजन दो, माँ ने कहा बेटा तुम्हारे पिता जी ने खाना नहीं बनाने दिया है और मुझे बुरा-भला भी कहा। बेटे ने कहा माँ। इसमें मैं क्या करूँ ? उसी प्रकार छोटे ने भी पूछा, माँ ने वही उत्तर दिया। बेटा क्रोधित होकर बोला, बता वह कहाँ है, मैं उसे देख लूँगा।

पति महोदय ने पूछा यह बच्चा ऐसा क्यों बना ? पत्नी कहती है कि जब यह पेट में था यहाँ से एक कसाई जा रहा था। यहाँ यह कहा जा सकता है कि ठीक है, मनुष्य अपने संस्कार ले कर आता है, परन्तु गर्भावस्था का समय इतना संवेदनशील होता है जिसे हम नहीं जान पाते। इसलिए यह अन्तर आता है जिसकी सम्भावना अधिक रहती है।

खोज करने पर पता चला और माताओं ने स्वीकार भी किया कि बड़े बेटे के समय हम पति-पत्नी दोनों अकेले रहते थे। किसी प्रकार का तनाव नहीं होता था। छोटे बेटे के समय मेरी सास कई बार तनाव का वातावरण पैदा कर देती थी जिसके कारण बच्चा चिड़चिड़े स्वभाव का हुआ। बहुत बार आप खुद विचार करके पायेंगी कि कोई भूल अवश्य हुई है।

।। इति शम् ।।

छोटे अक्षरों का परिचय

अ०	अध्याय
आश्व०	आश्वलायन
गृह्य०	गृह्यसूत्र
च०	चरक
नि०	निरुक्त
भर्तृ०	भर्तृहरि
मनु०	मनुस्मृति
यजु०	यजुर्वेद
वै०	वैराग्य
यास्क	यास्काचार्य
श०	शरीर
शत०	शतक
स्था०	स्थान
स०	सर्ग
सु०	सुश्रुत
ऋ०	ऋग्वेद

सन्दर्भ सूची

★ मनुर्भव जनया दैव्यं जनम—ऋ० १०।५३।६

१. मनोवैज्ञानिक फ्रायड़ का कहना है कि बच्चा अपने जीवन के ६ वर्षों में जो अनुभव प्राप्त करता है, उसका उसके चरित्र निर्माण पर सब से अधिक प्रभाव पड़ता है। अतः बालक के चरित्र निर्माण का ६० प्रतिशत दायित्व उसके माता–पिता पर है।

२. पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात् कुशलो भिषक्।।
—सु० श० स्था० ३५।१०

३. A child is the reflection of his parents's actions and reactions.

४. शिक्षा, आचार, विचार, व्यवहार, संस्कार।

५. नि०— यास्क०

६. स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ। ऋ० ८।३।१६

७. चिकित्सदृतचिद्ध नारी।....... यजु० ४।१६।१०

८. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफलाः क्रियाः।।
मनु०

६. आचारं ग्राहयति इति आचार्यः।
आचिनोत्यर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा। नि०— यास्क०।

१०. मम पुत्राः शत्रुहणोऽथो मे दुहिता विराट्।
उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः।।
ऋ० २०।१५६।३

११. चरक 'श० स्था०' अ० ८, स० १–२८।

१२. रात्रि गणना नियम के अनुसार गिन लेनी चाहिए।

१३. युगल = सम रात्रियां जैसे ८, १०, १२, १४, १६।

१४. एकल = विषम रात्रियां जैसे ७, ६, १३, १५।

१५. तत्र शुक्रबाहुल्यात् पुमान् आर्त्तवबाहुल्यात्
स्त्री साम्यादुभयोः–नपुंसकमिति।

सु० श० स्था०–३। १५

१६. सद्यो गृहीतगर्भाया लिङ्गानि–श्रमो ग्लानिः पिपासा सक्थिसदनं शुक्रशोणितयोरवबन्धस्फुरणं च योनेः।।

सु० श० स्था०–३/१३

१७. इसे पुसंवन संस्कार कहते हैं।

१८. सु० श० स्था० अ० ६

१६. एक ऐसे सुमधुर, प्रेरणाप्रद, समयानुकूल संगीत की आवश्यकता है, जो इस समय को ध्यान में रखकर बनाया गया हो। इसके अभाव में (जैसा टी०वी०, रेडियो) में आता है, माँ उसे सुनती है और बच्चे की भी वैसी ही रुचि बनती चली जाती है। आज अधिकतर माताएँ नौकरी व व्यापार करती हैं। जो एक तनावपूर्ण समय रहता है। आठ घण्टे की ड्यूटी करके थकी हुई माँ अपने बच्चे के लिए कुछ विशेष नहीं कर पाती है। यह ऐसा संगीत होगा जो सुबह–शाम एक या दो घण्टे सुनने पर माँ के तनाव को कम कर सकेगा। आने वाले बच्चे के मन और शरीर पर इसका अच्छा प्रभाव आएगा। हम शीघ्र ही ऐसा संगीत तैयार कर रहे हैं।

२०. विद्–ज्ञाने, विद्–विचारणे, विद्लृ–लाभे, विद्–सत्तायाम्

नि०– यास्क०

२१. इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चितिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्।।

ऋ० २। २१। ६

२२ ओम् अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव।
वेदो वै पुत्र नामासि स जीव शरदः शतम्।।

आश्व० गृह्य० १। १५। ३

२३. ओम् ईशा वास्यमिदं सर्वम् यत्किञ्चिज्जगत्याम् जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।
यजु० ४०।१

२४. लोगों का मानना है कि वाल्मीकि डाकू से महर्षि बने परन्तु यह श्लोक बताता है कि वह एक ऋषि के पुत्र थे।
प्रचेतसोऽहं दशमो पुत्रः रघुनन्दनः।
मनसा वाचा कर्मणा न मया किल्विषम्।।

२५. "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।"
२६. "क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्।।"—भर्तृ०
२७. ओम् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।
यजु० ३।६०

२८. ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता—भर्तृ० वै० श०
२६. शौर्यस्य वाक् संयमः— " "
३०. ज्ञानस्योपशमः— " "
३१. श्रुतस्य विनयः। " "
३२. वित्तस्य पात्रं व्ययः।। " "
३३. अक्रोधस्तपसः। " "
३४. क्षमा बलवताम्।। " "
३५. धर्मस्य निर्व्याजता। " "
*** ऋत्वारम्भे रविः पुंसां शुक्रान्ते च सुधाकरः।
अनने क्रमयोगेन नादत्त दैवदारुकम्।।

चन्द्रनाड़ी यदा प्रश्ने गर्भे कन्या तदा भवेत्।
सूर्यो भवेत्तदा पुत्रो द्वयोर्गर्भो विहन्यते।।
शिव स्वरोदय

आपके पत्र, आपकी सम्मति

॥ ओ३म् ॥

श्रीमान् आदरणीय, आर्य जगत् के गौरव,
महान् वक्ता, श्रेष्ठ व्यक्तित्व के धनी,
डॉ० देव शर्मा जी,
नमस्ते।

मैं एक छोटे से गाँव में रहने वाला एक नौवजान हूँ, मेरा व्यक्तित्व आरम्भ से ही गम्भीर रहा है। मैं कविता, गीत भी बना लेता हूँ, और बारहवीं कक्षा में पढ़ता हूँ।

मैंने आपको पहली बार बल्लभगढ़ के आर्यसमाज मन्दिर में 22 नवम्बर 1998 को सुना और देखा, यह मेरा पहला आर्य प्रोग्राम था। मैंने उस दिन सारा प्रोग्राम देखा और सुना, कई महापुरुषों के भाषण सुने, लेकिन आपकी वक्तृता शैली में अलग ही आकर्षण था। आपके बोलने की कला और मधुर आवाज आपके श्रेष्ठ व्यक्तित्व का परिचय दे रही थी।

मैं बैठे-बैठे ही अन्तर्मन में मुग्ध हो रहा था और सोच रहा था कि ऐसे व्यक्तित्व से सम्पर्क बनाना चाहिए। आपके बोलने का विषय (देश की सन्तान कैसी हो) बैठे श्रोताओं को भा ही रहा था, साथ ही आपके व्यक्तित्व से जीवन का भी मार्ग-दर्शन हो रहा था। जैसे ही आपने भाषण को विराम देते हुए अपनी पुस्तक 'मनचाही सन्तान' के विषय में कहा तो झट से मुझे सम्पर्क बनाने का रास्ता मिल गया था। और जैसे ही आपने माइक छोड़कर पीछे स्थान ग्रहण किया, मैंने झट

से उठकर आपसे यह पुस्तक खरीद ली। और घर आने पर सब से पहले इसी पुस्तक का अध्ययन किया।

इस पुस्तक के सफेद पन्नों पर लिखे ये काले अक्षर ज्ञान के भण्डार हैं, और जीवन की राहों का वो दीया है जो इन्सान को सफलता के मार्ग तक ले जा सकता है।

मैंने इस पुस्तक को अपने दोस्त को अध्ययन के लिए दिया जिसने पुस्तक लौटाते समय आपकी कला व्यक्तित्व का बखान किया। मैं इस महत्त्वपूर्ण पुस्तक का धन्यवाद करता हूँ।

आपका

चन्द्रप्रकाश (सुपुत्र ब्रह्मसिंह)

वी०पी०ओ०—जवां

तहसील-बल्लभगढ़, फरीदाबाद-121004

।। ओ३म् ।।

आदरणीय डॉ० देव शर्मा जी,

सादर प्रणाम।

मेरा नाम अर्चना है। जब आप करनाल आये थे तब मैंने आपसे "मनचाही सन्तान" पुस्तक ली थी। और सारी पढ़ ली है। यह पत्र मैं आपको लिख रही हूँ क्योंकि मुझे पुस्तक बहुत अच्छी और लाभदायक लगी है। भाषा काफी सरल है और हर वाक्य में वजन है, पुस्तक छपी भी बहुत अच्छी है। पुस्तक में काफी ज्ञान संक्षिप्त और सरल जैसे गागर में सागर भरने वाली बात है।

पुनः आपको इतनी अच्छी पुस्तक लिखने पर बधाई।

अर्चना

1428/13, अर्बन स्टेट,

करनाल-132001

Er. Brajabandhu Panda
Biswanath Arya Bhawan
(A Home for Vedic Life Study & Culture)
Haridaspur, P.O. - Naharkanta
Balianta, Bhubaneswar,
Khurda, Pin - 75211

Ref. : Letter No. EN 22 **Date : 2-3-99**
Ref. : Your Letter No. ND Dates 3-2-99

सम्मानार्ह देव शर्मा जी,

सादर सप्रेम नमस्ते। आपका पत्र मिला। आपके द्वारा लिखित 'मनचाही सन्तान' पुस्तक का हम ने आमूलचूल पाठ किया। यह पुस्तक इतना उपादेय है कि इसका गुणानुवाद करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। प्रत्येक नवविवाहित दम्पती के लिए यह पुस्तक एक हैण्डबुक का काम देगा। व्याधिग्रस्त समाज को सुधारने के लिए यह पुस्तक महौषधि की भूमिका का निर्वाह करेगा। नव दम्पती के लिए यह अत्यन्त ज्ञातव्य, विज्ञान सम्मत और संक्षिप्त है, मैं इस पुस्तक को इतना अच्छा समझता हूँ कि उड़िया मैं इसका अनुवाद कराने और नवविवाहित को अर्पण करने की आशा करता हूँ।

भवदीय—
श्री ब्रजबन्धु पण्डा
अध्यक्ष
Biswanath Arya Bhwan
(A Home for Vedic Life Study & Culture)
Haridaspur, P.O. - Naharkanta
Balianta, Bhubaneswar,
Khurda, Pin - 75211

।। ओ३म् ।।

आदरणीय श्री शर्मा जी,

सादर सप्रेम नमस्ते।

अत्र कुशलं तत्रास्तु। आपकी पुस्तकें दिनांक 26.12.98 को प्राप्त हो गयी थीं। पुस्तक प्रत्येक युवक-युवती के पढ़ने योग्य है। अच्छा मार्ग-दर्शन किया है। पृष्ठ 35 पर शंका क्या बच्चों को टी०वी० प्रूफ सेक्स प्रूफ, हिंसा प्रूफ बनाया जा सकता है ?

अबोध बच्चों के हृदय एवं मस्तिष्क पर दर्शन व श्रवण का अमिट प्रभाव पड़ता है। सौभरि ऋषि की कथा कल्याण के सन्त कथा अंक में पढ़ी। तुलसीदास के इस कथन पर विचार करें-शिव, चतुरानन देखि डरेहि। कोई अपवाद रूप में भले ही प्रभावित न हो अन्यथा बच्चे तो क्या बड़े-बड़े समझदार भी पथभ्रष्ट होते देखे सुने हैं। इस में संशोधन करने का निवेदन है। आपसे निवेदन है कि युवक-युवती व पति-पत्नी समस्याओं व योग सम्बन्धी विचारों को ''सार्वदेशिक साप्ताहिक'' 'वेद प्रकाश' व अन्य पत्रिकाओं में अवश्य प्रकाशित करावें।

भवदीय—

कृष्ण औतार

पूर्व मन्त्री आर्यसमाज

बढ़ापुर (बिजनौर) 246724

नोट : चतुर्थ अध्याय में इसका समाधान देने का प्रयास किया गया है।

विशेष प्रबन्ध

परामर्श
युवक/युवती समस्याएं
पति-पत्नी समस्याएं

योग
शरीर के लिए
मन के लिए
आत्मा के लिए

विशेष खोज
बच्चों का निर्माण
बच्चों का स्वास्थ्य
बच्चों की बुद्धि

प्रवचन
समसामयिक
पारिवारिक
आध्यात्मिक

विशेष
ऐसे बच्चे जो क्रोधी, जिद्दी व चिड़चिड़े हों, पढ़ाई में कमजोर हों, पढ़ने में मन न लगता हो उनके लिए विशेष परामर्श का प्रबन्ध है।

परामर्श का समय
प्रातः 9 से 12 बजे सायं 6 से 9 बजे

कार्यालय
ए-1/48/सेक्टर 6, रोहिणी,
दिल्ली-110085, दूरभाष-7056240

भजन

आदर्श बालक

नित्यप्रति उठकर रोज सवेरे पहला हम यह काम करें।
शीश झुकाकर मात-पिता के चरणों में प्रणाम करें।।

हों प्रसन्न जब माता-पिता देंगे शुभ आशीष तभी।
जीवन होगा सफल हमारा पूरे होंगे काम सभी।।

बड़ों का आदर करने में कौड़ी भी लगता दाम नहीं।
बड़ों की सेवा करने जैसा और कोई शुभ काम नहीं।।

बड़ों की आज्ञा मान के वन में राम गए थे चौदह साल।
घर-घर उनकी पूजा होती बीत गए हैं लाखों साल।।

बड़ों की सेवा करके जग में अमर हो गया श्रवणकुमार।
चमक रहा आकाश के अन्दर देख रहा सारा संसार।।

इसलिए हम भी सदा बड़ों का आदर और सम्मान करें।
उनके पद चिह्नों पर चलकर जीवन का कल्याण करें।।

विद्यालय में जो अध्यापक हमको देते हैं शिक्षा।
उनके उपकारों का ऋण भी नहीं चुकाया जा सकता।।

कितनी सुन्दर-सुन्दर बातें हम को ये बतलाते हैं।
मात-पिता सिखला नहीं सकते जो कुछ ये सिखलाते हैं।।

इसी वास्ते गुरु का दर्जा बढ़कर है माँ-बाप से भी।
गुरु की आज्ञा जिसने मानी उसके पूर्ण काम सभी।।

दृढ़ निश्चय यह आज करें हम बड़ों की आज्ञा पालेंगे।
अपने जीवन को 'सेवक' असली साँचे में ढालेंगे।।

साभार सुमधुर गीत-संग्रह

पुत्र-प्राप्ति

हमने आपकी पुस्तक **'मनचाही संतान'** पढ़ी। उसमें लिखी विधि के अनुसार और ईश्वर के ईच्छा के अनुसार इस प्रयोग को अपनाने का निश्चय किया।

आपके निर्देशानुसार हमने इस विधि में धातु–शुद्धिकरण, हवन, रात्रिगणना, सम–विषम रात्रिगणना का नियम, खाने–पीने की वस्तुओं को ध्यान में रखा और ब्रह्मचर्य का पालन किया। जिसके फलस्वरूप हमें पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई।

मेरी अपनी सभी बहनों से यही प्रार्थना है कि पाप एवं भ्रष्टाचार को रोकने के लिए अगर संतान पैदा करनी है तो इस विधि को एक बार जरूर अपना कर देखें। इस में लाभ ही है, हानि नहीं है। हम लेखक के परिश्रम के लिए उन्हें धन्यवाद देते हैं।

मुक्ति गुप्ता
मनोज गुप्ता
3232/236, राम नगर
त्री नगर, दिल्ली–35

जिनका विवाह होना है वे इस पवित्र बन्धन के विषय में क्या विचार रखते हैं ? क्या उनकी तैयारी है ? उनकी कोई योजना है ? शायद नहीं।

★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★

इस प्रकार की थोड़ी सी जानकारी से शायद हम 'भ्रूण हत्या' जैसे महा पाप से बच सकें। आइये ऐसी जानकारी हम अपने मिलने वालों तक पहुँचायें।

★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★

अंगारे पर थोड़ी राख आ जाती है। परन्तु हिलाने पर पुनः चमकने लगता है यही बात बच्चों पर भी लागू होती है। आप उन्हें सारी बातें याद दिलाते रहिए, हिलाते रहिए, आप देखेंगे कि हाथ काले करने वाली राख उन पर नहीं जम पाएगी।

★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★

लोगों ने भगवान् की शक्ति को माँ में ढूँढ़ने का प्रयास किया है और जगह-जगह माँ के मन्दिर बना कर पूजा प्रारम्भ कर दी है। कहीं दुर्गा के रूप में, तो कहीं वैष्णो देवी के रूप में शक्ति का अहसास किया और नमन किया है, परन्तु क्या हमने अपने घर रूपी मन्दिरों में बैठी हुई माँ, पत्नी, बहिन के रूप में देवी शक्ति का अहसास किया ? उस के सम्मान की रक्षा की ? उस से तो पढ़ने का अधिकार भी छीन लिया, नरक का द्वार भी बता दिया, ताड़न का अधिकारी तक कह डाला.....। धन्य हैं महर्षि दयानन्द जिन्होंने आकर पुनः इसके मान-सम्मान एवं शक्ति की रक्षा की और कहा—"अशिक्षित माँ कैसे शिक्षित बच्चे को जन्म दे सकती है।"

डॉ॰ देवशर्मा वेदालंकार

जन्म	:	24 अप्रैल, 1965 मुज़फ़्फ़रनगर, उत्तर प्रदेश।
पिता	:	पं. हरपाल जी शास्त्री
माता	:	श्रीमती विमला शास्त्री
शिक्षा	:	गुरुकुल काँगडी विश्वविद्यालय से वेदालंकार, एम.ए. संस्कृत एवं दिल्ली विश्वविद्यालय से योग जैसे गूढ़ विषय पर एम.फिल. और पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।
गतिविधियाँ	:	लेखन, प्रवचन और परामर्श। आप लगभग दस वर्षों से वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार–प्रसार में लगे हुए हैं। 'बच्चों का निर्माण कैसे करें' आपका प्रिय विषय है। आपकी प्रवचन-शैली अत्यन्त रोचक एवं स्पष्ट हैं।
कार्यक्षेत्र	:	सम्पूर्ण भारतवर्ष। अधिक-से-अधिक युवकों के मार्गदर्शन हेतु प्रयास।
अन्य रचनाएँ	:	1. मैं मृत्यु से बचाता हूँ। 2. सात कदम मेरे संग। 3. पाँच वर प्रभु के संग।
कैसेट्स	:	गर्भावस्था के समय सुना जानेवाला, माँ–बच्चे पर विशेष प्रभाव छोड़नेवाला संगीत।
सम्पर्क	:	ए–1/48, सेक्टर–6, रोहिणी, नई दिल्ली–110085 दूरभाष–7056240 – M- 9810669895